जुलाई
2024

धर्म एवं अध्यात्म के तत्त्वज्ञान का वैज्ञानिक विश्लेषण

अखण्ड ज्योति

वर्ष 88 | अंक-7 | प्रति - ₹ 25 | ₹-300 वार्षिक

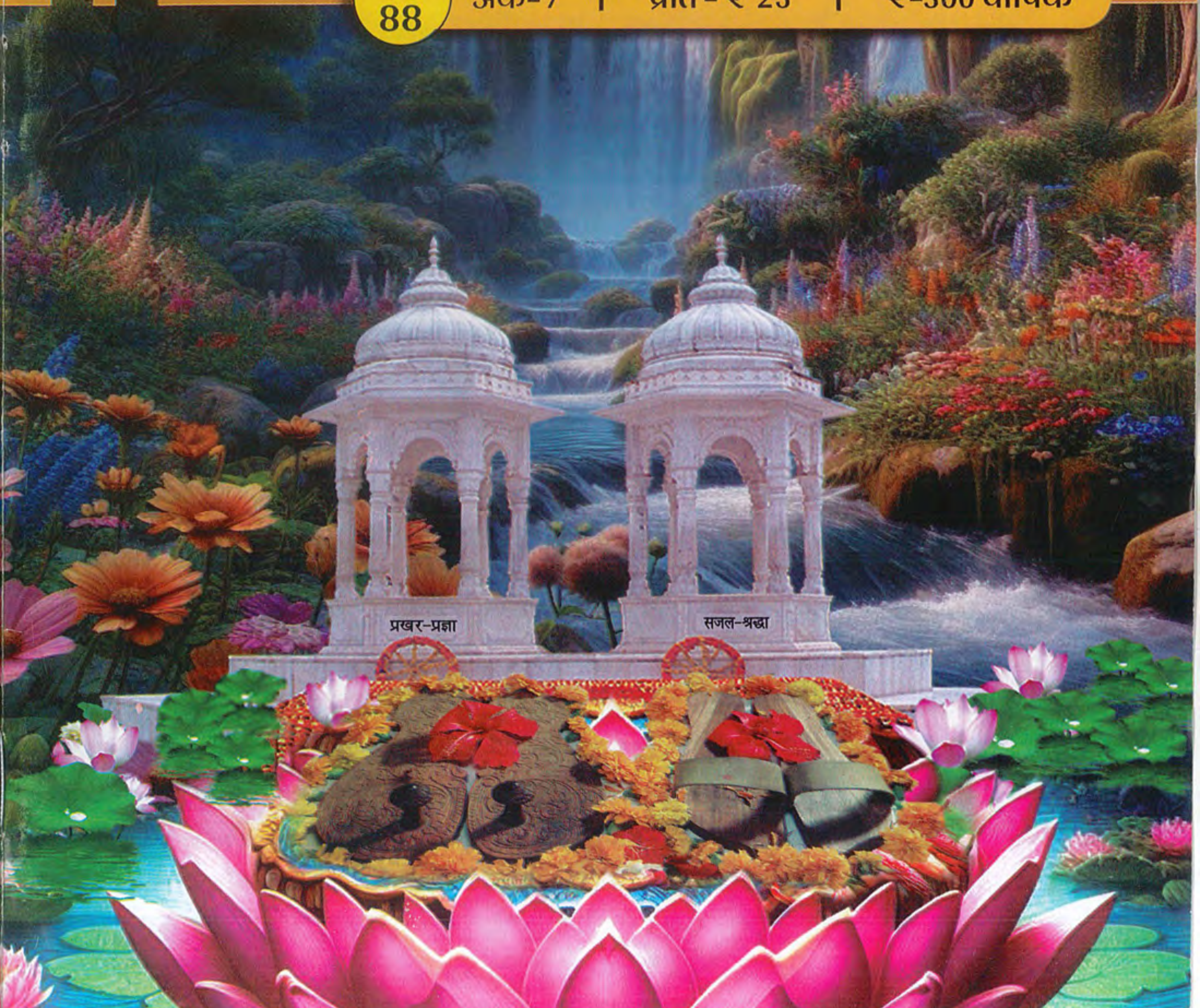

13 | बंधनमुक्त हो हमारा जीवन
32 | रहस्यों का पिटारा है ब्रह्मांड
41 | जीवनदायी पेड़ों से मिलते अनुदान
61 | पंचमहाभूतों में प्रकाश का अवतरण

75 वर्ष पूर्व अखण्ड ज्योति

जुलाई-1949

(पृष्ठ - 16)

क्या सिद्धियाँ आवश्यक हैं ?

जिन सिद्धियों के लिए लोग लालायित रहते हैं और अपनी व्यक्तिगत इच्छा और अभिलाषा लिए उन्हें प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं। उनके संबंध में आइए सार्वजनिक हित की दृष्टि से बड़े दृष्टिकोण से विचार करें कि यदि सिद्धियाँ सर्वसुलभ हो जाएँ तो संसार में सुविधा की वृद्धि होगी या असुविधा की।

मान लीजिए कि अपने जीवन की अवधि लोगों को मालूम हो जाए, यह पता चल जाए कि हमारी मृत्यु कब ? किस दिन ? कहाँ ? किस प्रकार होगी ? तो उस मनुष्य का जीवन बड़ा विचित्र हो जाएगा। अमुक दिन मरूँगा, इससे पहले नहीं मर सकता, यह निश्चय हो जाने पर वह बड़ी -से -बड़ी दुर्घटना करने के लिए, किसी से भी लड़ने- मारने के लिए तैयार हो जाएगा। मृत्यु के डर से लोग आगा-पीछा सोचते हैं और संघर्ष में पड़ने से बचते रहते हैं। जो मरने से निधड़क हो गया हो, उसे बड़े -से -बड़े उत्पात करने में कुछ भय न होगा। दूसरी बात यह भी है कि जिसे मालूम है कि मेरी मृत्यु के समय में केवल इतना समय रहा है, सांसारिक काम-धंधों से उदास होकर बैठ जाएगा। मृत्यु के शोक में बहुत पहले से डूब जाएगा। किन्हीं बड़े कामों का आयोजन न करेगा। समाज में मित्रता और घनिष्ठता स्थापित न करेगा। अपने दीर्घ जीवन की आशा से लोग धन, वैभव एकत्रित करते हैं, वह उनके मरने पर विधवा तथा बच्चों के काम आता है, जिसे मालूम है कि मुझे सिर्फ आठ महीने जीना है, वह संपत्ति संचय न करेगा; जो होगी, उसे भी खरच कर देगा, ऐसी दशा में पीछे वालों को जो पैतृक धन से सहायता मिलती है, वह न मिला करेगी। जो जल्दी मरने वाला होगा, उसका विवाह न होगा; बेचारा विवाह-सुख से भी वंचित रह जाएगा। अधूरी उम्र के स्त्री-पुरुषों को दूसरा साथी न मिलेगा, उन्हें अविवाहित जीवन बिताना पड़ेगा। इस प्रकार एक नहीं,हजारों प्रकार की कठिनाइयाँ बढ़ जावेंगी। यदि लोग अपना मृत्यु समय निश्चित रूप से जान लिया करें तो संसार का स्थिर रहना, उसकी कार्य प्रणाली चलना बड़ा कठिन हो जाए। यदि वह ऐसा न करता तो बेचारे वैद्य-डॉक्टरों का पेशा ही मिट जाता। जिसकी मृत्यु जिस स्थान पर जिस प्रकार होने को होती, लोग उसका बचाव करने के लिए दूर भागते और परमात्मा को अपना विधान कायम रखने के लिए भारी रस्साकशी करनी पड़ती। इस कठिनाई को ध्यान में रखकर परमात्मा ने मनुष्यों को मृत्युकाल का पहले से ही ज्ञान होना असंभव कर दिया है।

संस्थापक-संरक्षक
वेदमूर्ति तपोनिष्ठ
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य
एवं
शक्तिस्वरूपा
माता भगवती देवी शर्मा
संपादक
डॉ० प्रणव पण्ड्या
कार्यालय
बिरला मंदिर के सामने मथुरा-वृंदावन रोड जयसिंहपुरा, मथुरा (281003)
दूरभाष नं० (0565) 2403940, 2972449 2412272, 2412273
मोबाइल नं० 9927086291
7534812036
7534812037
7534812038
7534812039
समय—प्रातः 10 से सायं 6 तक कृपया इन मोबाइल नंबरों पर एस. एम. एस. न करें।
नया ई-मेल :
akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org

वर्ष	:	88
अंक	:	07
जुलाई	:	2024
आषाढ़-श्रावण	:	2081
प्रकाशन तिथि	:	01.06.2024

वार्षिक चंदा

भारत में	:	300/-
विदेश में	:	2800/-
आजीवन (बीसवर्षीय)		
भारत में	:	6000/-

गायत्री महामंत्र

गायत्री महामंत्र '**ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्**' का रहस्यज्ञान परमगुरु ने अपने महान शिष्य को दिया। यही उनकी चौबीसवर्षीय-चौबीस महापुरश्चरण साधना का आधार बना। परमगुरु ने उन्हें इस साधना को 8-8 वर्ष के तीन चरणों में पूरा करने के लिए कहा। इन तीन चरणों में उनके सम्मुख तीन व्याहृतियों, गायत्री के 3 चरणों, 9 शब्दों एवं 24 अक्षरों के भेद-उपभेद सभी प्रकट हुए। गायत्री महासाधना के प्रथम चरण में सन् 1926 से 1934 तक उन्होंने स्वयं को केंद्र बनाकर, महामंत्र के नौ शब्दों के माध्यम से भारतभूमि को प्रभावित करने वाले 9 ग्रहों को अनुकूल किया। इससे देश के स्वाधीनता आंदोलन को गति मिली। धरती पर भी उथल-पुथल हुई। इसके दूसरे चरण सन् 1934 से 1942 तक 9 शब्दों व 3 व्याहृतियों- इन 12 के माध्यम से 12 राशियों के अंधकार-अवरोध के समापन का क्रम बना। इसके प्रभाव से भारत में स्वाधीनता का निर्णायक 'भारत छोड़ो आंदोलन' संभव हुआ और विश्व में दूसरे विश्वयुद्ध के माध्यम से इतिहास व भूगोल का परिदृश्य बदला।

तीसरे चरण की यह महासाधना सन् 1942 से 1950 तक चली। यह निर्णायक एवं निश्चयकारक चरण था। इन 8 वर्षों में स्वाधीन भारत एवं भारतीय गणतंत्र की स्थापना हुई। विश्व में वैश्विक जीवन के अनेकों आयाम बदले। इसके लिए गायत्री के 9 शब्दों के 3 चरणों को 3 व्याहृतियों के साथ इस तरह गूँथा गया कि **मंत्र के 9 शब्दों ने अपनी 3 गुना सामर्थ्य से सभी 27 नक्षत्रों के प्रकाश-प्रवाह द्वारा देश व धरती के लिए अनुकूल वातावरण बनाया।** अब बारी इन सबके समन्वित स्वरूप से 24 मंत्राक्षरों द्वारा मूल प्रकृति समेत 24 तत्त्वों को प्रकाशित करने की है। इन दिनों यही किया जा रहा है। ❒

►'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

विषय सूची

❁ आवरण—1 1
❁ आवरण—2 2
❁ गायत्री महामंत्र 3
❁ **विशिष्ट सामयिक चिंतन**
उभरती युवाशक्ति 5
❁ अंतस् का शोधन है अध्यात्म 7
❁ गुरुभक्ति की महिमा 8
❁ **पर्व विशेष—स्वामी विवेकानंद पुण्यतिथि**
नूतन भविष्य के प्रवक्ता स्वामी विवेकानंद 10
❁ बंधनमुक्त हो हमारा जीवन 13
❁ अद्‍भुत व्यक्तित्व के धनी—संत कबीर 15
❁ अहं को मिटाने का मार्ग है अध्यात्म 17
❁ मैं कौन हूँ 19
❁ भारतीय संस्कृति का जीवन संदेश 22
❁ अपना काम स्वयं करें 24
❁ धर्म एवं मत 28
❁ पात्रता का विकास 30
❁ रहस्यों का पिटारा है ब्रह्मांड 32
❁ कुंठाओं की कर्कशता 34
❁ पेंगुइन पक्षियों का रोचक संसार 37
❁ जीवन का आधार है आत्मविश्वास 39
❁ जीवनदायी पेड़ों से मिलते अनुदान 41
❁ **पूज्य गुरुदेव जैसा मैंने देखा-समझा—22**
एक शरीर से पाँच शरीरों जितना काम 43
❁ बच्चों में योग शक्ति का विकास 45
❁ **ब्रह्मवर्चस-देव संस्कृति शोध सार—183**
सूर्य नमस्कार का मनोविकारों पर प्रभाव 47
❁ **युगगीता—290**
तीन प्रकार का त्याग 51
❁ **परमवंदनीया माताजी की अमृतवाणी**
धन्य होंगे जो कि इस अभियान से
जुड़ जाएँगे (उत्तरार्द्ध) 53
❁ **विश्वविद्यालय परिसर से—229**
योगमय हुआ विश्वविद्यालय 58
❁ **साधना शताब्दी—विशिष्ट लेखमाला**
पंचमहाभूतों में प्रकाश का अवतरण 61
❁ **अपनों से अपनी बात**
गुरु पूर्णिमा के गुरुतर संकल्प 64
❁ गुरुवचनों में प्रीति (कविता) 66
❁ आवरण—3 67
❁ आवरण—4 68

आवरण पृष्ठ परिचय

गुरु पूर्णिमा पर गायत्रीतीर्थ उल्लासमय

जुलाई-अगस्त, 2024 के पर्व-त्योहार

मंगलवार	02 जुलाई	योगिनी एकादशी	सोमवार	12 अगस्त	तुलसी जयंती
रविवार	07 जुलाई	रथयात्रा	गुरुवार	15 अगस्त	स्वतंत्रता दिवस
शुक्रवार	12 जुलाई	सूर्य षष्ठी	शुक्रवार	16 अगस्त	पवित्रा एकादशी
बुधवार	17 जुलाई	देवशयनी एकादशी	सोमवार	19 अगस्त	रक्षाबंधन/ श्रावणी पूर्णिमा
रविवार	21 जुलाई	गुरु पूर्णिमा			
बुधवार	31 जुलाई	कामिका एकादशी	गुरुवार	22 अगस्त	बहुला चौथ
रविवार	04 अगस्त	हरियाली अमावस्या	शनिवार	24 अगस्त	हल षष्ठी
शुक्रवार	09 अगस्त	नाग पंचमी	सोमवार	26 अगस्त	श्रीकृष्ण जन्माष्टमी
शनिवार	10 अगस्त	सूर्य षष्ठी	गुरुवार	29 अगस्त	अजा एकादशी

★ **यह पत्रिका आप स्वयं पढ़ें तथा औरों को पढ़ाएँ। कुछ समय के बाद किसी अन्य पात्र को दे दें, ताकि ज्ञान का आलोक जन-जन तक फैलता रहे।** —*संपादक*

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष◀

विशिष्ट सामयिक चिंतन

उभरती युवाशक्ति

युवा—साहस, शौर्य, संवेदना एवं शक्ति का प्रज्वलित प्रतीक है। युवा ऊर्जा का संघनित एवं घनीभूत पुंज है। संवेदना और साहस की सघनता में ही युवाशक्ति प्रज्वलित होती है। जहाँ भाव छलकते हों, साहस मचलता हो, वहीं यौवन के अंगारे शक्ति की धधकती ज्वालाओं में बदलने के लिए तत्पर हैं।

विपरीतताएँ इसे प्रेरित करती हैं, विषमताओं से इसे उत्साह मिलता है। समस्याओं के संवेदन इसमें नई ऊर्जा का संचार करते हैं। काम की कुटिल व्यूहरचनाओं की छुअन से युवाओं की यह ऊर्जा और अधिक उफनती है और तब तक नहीं थमती, जब तक कि यह इन्हें पूरी तरह से छिन्न-भिन्न न कर दे।

देश का भविष्य युवाओं पर निर्भर है। अपने देश में 18-23 आयु वर्ग के करीब 15 करोड़ युवा हैं। केवल यह महत्त्वपूर्ण नहीं है कि हम देश के सबसे बड़े जनसांख्यिकी वर्ग की जरूरतों पर ध्यान दें, बल्कि यह भी बहुत जरूरी है कि हम उन्हें रचनात्मक प्रक्रिया में शामिल करें, ताकि देश के विकास के लिए उनका मार्ग प्रशस्त हो सके।

हमें देश के अलग-अलग भागों और विभिन्न वर्गों से भारत के भविष्य को नया आकार देने के लिए युवाओं को एकजुट करना चाहिए। इनमें किसानों से लेकर उद्योगपति और देश के शीर्ष संस्थानों के छात्र भी शामिल होने चाहिए।

युवाओं की यह नवीनतम पहल आकांक्षाओं से सराबोर युवाओं को नया आधार उपलब्ध कराएगी। युवाओं की ऊर्जा एवं उचित मार्गदर्शन बदलते सामाजिक-राजनीतिक परिवेश और जन आकांक्षाओं के साथ बदलनी भी चाहिए। अतीत में अपनी जड़ों को मजबूती से जमाए हुए यह बदलती सोच परिवर्तन को आत्मसात् करती है और इस प्रकार भारत के अतीत को इसके चमकदार भविष्य से जोड़ती है।

नए भारत की आवाज पुरानी नहीं हो सकती है। आखिरकार भारत की औसत आयु महज 24 साल है। हमें भारत के युवाओं की रचनात्मक प्रतिभा को सँवारने में सहायता प्रदान करनी ही चाहिए। हमें युवाओं की आकांक्षा के आधार पर उनके लिए भारत निर्माण करना है। युवा वर्ग तब तक विकास नहीं कर सकता, जब तक हम उसकी आकांक्षाओं पर ध्यान केंद्रित नहीं करेंगे।

इससे भी महत्त्वपूर्ण यह है कि हम युवा भागीदारी के बिना एक स्थायी तंत्र का निर्माण नहीं कर सकते हैं। चुनाव में किसी मसीहा को नहीं चुना जाता है, जो हमारी तरक्की के वादे करता हो। निर्वाचित जनप्रतिनिधि ऐसा होना चाहिए, जिसके पास देश को बदलने की दृष्टि और क्षमता हो और जिसके पास ऐसे विचार हों, जो देश को नई दिशा में ले जा सकें।

भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है, किंतु हमारे सामने सबसे बड़ी चुनौती यह है कि इसे और व्यापक कैसे बनाया जाए। इसके लिए हमें ऐसी योजनाएँ और नीतियाँ तैयार करनी चाहिए, जिनसे सरकार आखिरी व्यक्ति की आवाज भी सुन सके। लोकतंत्र को आम जन तक ले जाने का परिणाम है सुशासन। इसी से सभी नागरिक गरिमा

के साथ जीवन जी सकते हैं और यह सुनिश्चित हो सकता है कि उनकी आवाज सुनी गई।

प्रत्येक भारतीय, चाहे उसका जो भी पंथ, रंग, क्षेत्र, जाति, भाषा हो उसकी बात सुनी जानी चाहिए। किसी खास पंथ, धर्म, क्षेत्र, भाषा या जाति की आवाज के बदले समग्र भारत के विभिन्न वर्गों के लोगों को साथ लेकर चलने का साहस चाहिए। प्रत्येक युवा इस महती जिम्मेदारी को निभाने के काबिल है, जो हमें महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू और सरदार पटेल जैसे नेताओं से विरासत में मिली है।

यह लगातार चलने वाली प्रक्रिया है। यह सरकार और नागरिकों के अनुभवों का प्रतिनिधित्व करती है। इस प्रक्रिया से युवाओं को जोड़ना दरअसल उन्हें यह अवसर प्रदान करना है कि वे भारत के समक्ष मौजूदा चुनौतियों को समझ-परख सकें। युवा हमारे देश की सबसे बड़ी ताकत हैं और यह हम सबकी जिम्मेदारी है कि इस ताकत का हरसंभव तरीके से ध्यान रखा जाए।

आजादी के बाद अनेक विश्लेषकों ने घोषणा की थी कि भारत का जल्द ही पतन हो जाएगा। लेकिन साढ़े छह दशक से अधिक का समय बीतने के बाद भी न केवल हम लोकतंत्र को बचा पाए हैं, बल्कि हमने इसे कहीं अधिक मजबूत भी किया है। सन् 1948 में जनरल क्लाउड ओचिंलेक ने घोषणा की थी कि एक देश के रूप में भारत के विखंडन की शुरुआत हो चुकी है।

सन् 1961 में एल्डाउस हक्सले ने लिखा था कि नेहरू के जाते ही सरकार सैन्य तानाशाही में बदल जाएगी। सन् 1967 में लंदन के 'दि टाइम्स' अखबार ने लिखा था कि लोकतांत्रिक ढाँचे में भारत के विकास का महान अनुभव विफल हो चुका है। जल्द ही भारत चौथे और निश्चित रूप से आखिरी आम चुनाव के लिए मतदान करेगा। भारत में गहरे तक पैठे लोकतंत्र ने इन तमाम विद्वानों को झुठला दिया है। लोकतंत्र में लोगों की भागीदारी को मजबूती प्रदान करने के लिए युवाओं ने भारत को एकता के सूत्र में बाँधे रखा है।

हमारे संस्थापकों ने भारत के राजनीतिक तंत्र का आधार बालिगों के मताधिकार को बनाया है। यह एक ऐसी व्यवस्था है, जो अन्य पुराने लोकतंत्र भी लंबे संघर्ष के बाद ही हासिल कर पाए हैं। हमारे देश में महान नेताओं ने गरीब और कमजोर समाज में लोकतंत्र की मजबूत आधारशिला रखी, जबकि राजनीतिक विश्लेषक इसके उलट भविष्यवाणी कर रहे थे।

'श्रद्धा' का अर्थ है—परिपूर्ण विश्वास। ऐसा विश्वास जिसमें शंका-कुशंका, तर्क-वितर्क आदि की कोई गुंजाइश न हो। 'प्रज्ञा' का अर्थ है—स्व-विवेक। इतना दृढ़, जिसमें अपना संकल्प ही मूर्तिमान न हो सके। किसी से पूछने की कोई गुंजाइश ही न रहे।

यह अधिकांश विदेशी विश्लेषकों के लिए भी हैरत की बात है कि हमारा लोकतंत्र बहुसंख्यकतंत्र में नहीं बदला है। इसके बजाय भारत जैसे विविधता से भरे देश में इसने एकता और समता को पोषित किया है। आजादी के साथ ही युवाओं ने गणतंत्र के सिद्धांतों में विश्वास रखते हुए लोकतंत्र को अधिक व्यापक और गहरा किया है। महात्मा गांधी ने लिखा था कि एक सच्चा लोकतंत्र केंद्र में बैठे 20 लोगों द्वारा नीचे से चलाया जाना चाहिए। इस लक्ष्य ने हमेशा भारत के युवाओं का मार्गदर्शन किया और यही भविष्य में करने वाला है; क्योंकि भारत की युवाशक्ति उभर रही है। ❑

अंतस् का शोधन है अध्यात्म

हम सब भगवान की सेवा करना चाहते हैं, परंतु उसके अनुकूल भावना को विकसित नहीं करते। भावना जब विकसित हो जाती है तो उसे ही अध्यात्म कहते हैं। अध्यात्म और कुछ नहीं, आपके मनोभावों की परिष्कृति का ही स्वरूप है, इसे जिसने जान लिया वह जीवन में करने योग्य एक ही कार्य समझता है—वह है अपनी आत्मा की शुद्धि और उत्कृष्ट-जीवनक्रम की दिशा में बढ़ना।

यह होगा अपने अंतस् के शोधन से, जिसका एकमात्र उपाय अध्यात्म है। जिस किसी विधि द्वारा अंत: का परिष्कार होता है, भावनाएँ निर्मल होती हैं तथा चरित्र महान बनता है—वह अध्यात्म का ही एक अंग है तथा इसका उद्‌देश्य व्यक्ति को उस योग्य बनाना है, जिसमें कि उसकी आत्मा का प्रयोजन सिद्ध हो सके।

अध्यात्म वही उत्कट भावावस्था है, उसे किसी चमत्कृत कर देने वाले पुरुषार्थ से कम न समझा जाए। अपने आप को भगवान के हाथों सौंप देने का अर्थ होता है—अपनी इच्छाओं एवं वासनाओं को उन्हीं के सुपुर्द कर देना। फिर यह मानव-देह चलेगी तो एक दिव्य कार्य-प्रणाली द्वारा, सेवा-सुयोग की दिशा में, अमृत के रस-पान तथा जीवन की अंतिम महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति में—उसे ही सदिच्छा कहते हैं।

वह और कोई नहीं जीवन का निर्माण कर देने वाली इच्छा है, राग-दोष से परे की इच्छा, सेवा-विकल्प के अभाव में इच्छा, जीवन का परिष्कृत स्वरूप प्रदान करने की इच्छा। हर दृष्टि से मनुष्य जीवन के सही नियोजन की इच्छा।

ऐसी इच्छा को धारण करना एवं उसके अनुकूल प्रयोजन प्रस्तुत करना ही अध्यात्म का सार-तत्त्व है एवं इसके लिए चाहिए एक दृढ़-इच्छाशक्ति एवं प्रचंड मनोबल-उत्साह। परमात्मा की सेवा करने का प्रयोजन पूरा तभी होता है, जब जीवन दिव्य मनोभावों को लिए, चिंतन-चरित्र की परिष्कृति में जा लगता है एवं हर दृष्टि से उन्नत एवं विशाल बनने की दिशा में बढ़ चलता है। इसे ही जीवन-परिवर्तन एवं अपनी आत्मिक-सत्ता की किसी महान सदुद्‌देश्य में आहुति कहेंगे तथा इसका केंद्रीय आधार है विशुद्ध-प्रज्ञा।

न शास्त्रैर्नापि गुरुणा दृश्यते परमेश्वरः।
दृश्यते स्वात्मनैवात्मा स्वया सत्त्वस्थया धिया॥

—योगवासिष्ठ-6/118/4

अर्थात परमात्मा का दर्शन न शास्त्र करा सकते हैं, न गुरु। उनका दर्शन तो अपनी आत्मा में स्थित होने से ही होता है।

सेवा एकमात्र आत्मा की की जानी है। उसे ही विशाल बना उच्चतर महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति करनी है। वैश्विक परिक्षेत्र बड़ा है, परंतु पहले उसे स्वयं से शुरू कर लीजिए। पहले आत्मसुधार, फिर जग का कल्याण। दोनों प्रयोजन उस दिव्य सत्ता की परिस्थितिजन्य तत्परता तथा महत्त्वाकांक्षा को दरसाते हैं तथा जीवन का महान रथ चलता आत्मा की प्रगति के लिए ही है। ❑

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष◀

गुरुभक्ति की महिमा

संत एकनाथ की अपने गुरु जनार्दन स्वामी के प्रति अगाध श्रद्धा व भक्ति थी। एकनाथ जैसे गुरुभक्त व विरक्त शिष्य और जनार्दन स्वामी जैसे दत्तात्रेयस्वरूप सद्‌गुरु की प्राप्ति सचमुच दैवयोग से ही संभव हो पाती है।

पूर्वाभ्यास के फलस्वरूप निष्पाप व निष्काम हुए एकनाथ को सदा ब्रह्म में लीन रहने वाले जनार्दन स्वामी ने अपनी ओर सहज ही आकर्षित कर लिया था। जो सद्‌गुरु, सगुण व साकार रूप में शिष्य के लिए सहज ही प्रत्यक्ष प्रकट हैं उन्हीं का पूर्ण श्रद्धा व भक्ति से, परमात्मभाव से पूजन करना और गुरु की साकार छवि का अपने हृदय में, अपनी आत्मा में इस भाव से नित्य ध्यान करना कि निर्गुण, निराकार, अव्यक्त, सर्वज्ञ, सर्वव्यापी ब्रह्म ही सगुण, साकार रूप में प्रकट हुए हैं और सर्वत्र व्याप्त रहे हैं, इसी का नाम तो गुरुभक्ति है।

गुरु में सदैव ब्रह्म को देखना और ब्रह्म को गुरु में देखना, यही अद्वैतदृष्टि तो शिष्य को निहाल कर देती है, उसे ब्रह्मदृष्टि प्रदान कर देती है, जिससे शिष्य ब्रह्मभाव में स्थित गुरु का पूजन, दर्शन व ध्यान कर निश्चित ही सहज ब्रह्मप्राप्ति अथवा ब्रह्मबोध पा सकने में समर्थ व सफल हो जाता है।

एकनाथ भी ऐसे ही शिष्य थे, जो गुरु को सदा अद्वैत व अभिन्न दृष्टि से देखते थे। गुरुसेवा के प्रभाव से ही संत एकनाथ ने यह अनुभव किया था कि गुरुसेवा से ही चित्त चिद्‌रूप होता है, चित्त ब्रह्मरूप होता है और एकत्व व अद्वैत का उदय होता है और तब द्वैत रह ही नहीं जाता। तब शिष्य को सदैव अद्वैत की अनुभूति होती है उसे एकत्व की अनुभूति होती है।

उसे जीव और ब्रह्म में एकता, अभिन्नता व अद्वैतता की अनुभूति होती है। उसे आत्मा और ब्रह्म में एकत्व की प्रत्यक्ष अनुभूति होती है और आत्मा में ब्रह्मानंद की अनुभूति सदा-सर्वदा के लिए बनी रहती है।

गुरुकृपा से ही संत एकनाथ को श्री दत्तात्रेय भगवान का दर्शन प्राप्त हुआ था और उस दर्शन से ही उन्हें सारी सृष्टि को अद्वैत रूप से देखने की अभिनव दृष्टि प्राप्त हुई थी। गुरु के हर आदेश को वे ब्रह्म का आदेश मान उसे पूर्ण श्रद्धाभाव से संपन्न किया करते थे। गुरु के कहे अनुसार वे सतत भगवद्‌ध्यान, स्मरण, भजन, सत्संग, स्वाध्याय करते रहे। गुरु का आदेश पाकर उन्होंने तीर्थयात्राएँ कीं, भागवत ग्रंथों की रचना की और गृहस्थाश्रम में रहकर साधनाएँ कीं।

सच्चे मन से भगवद्‌भक्ति, गुरुभक्ति करते हुए आसक्ति व कर्त्तापन का त्याग कर व्यक्ति गृहस्थाश्रम में भी सहज ही भगवत्प्राप्ति कर सकता है, यह संत एकनाथ ने अपने जीवन से प्रत्यक्ष कर दिखाया। गुरुसेवा के प्रभाव से ही एकनाथ स्वयं ब्रह्मस्वरूप हो गए, अनुभवरूप हो गए, संत हो गए, चलते-फिरते तीर्थ हो गए।

एकनाथ का यह अनुभवजन्य उद्‌गार है कि ध्यान में गुरु का ध्यान करने से चित्त चिद्‌रूप हो जाता है, काया ब्रह्मभूत हो जाती है और आत्मा

ब्रह्मानंद से आह्लादित हो उठती है। धन्य हैं मेरे गुरु, जिन्होंने मुझे देहातीत भगवान दे दिया। धन्य हैं मेरे सद्‌गुरु, जिन्होंने मुझे ब्रह्मसाक्षात्कार करा दिया।

जब संसाररूपी विषैला अजगर मुझसे लिपट रहा था, तब मेरे गुरु श्री जनार्दन स्वामी ने ही धन्वंतरि बन मेरा उपचार किया। नन्हा एका (एकनाथ) तो बड़ा दुष्ट है, पर सद्‌गुरुदेव श्री जनार्दन स्वामी प्रेमसिंधु हैं और वे मुझे सदा अपने प्रेम से सराबोर करते हैं।

संत एकनाथ कहते हैं कि मेरे लिए तो मेरे सद्‌गुरु श्री जनार्दन ही वेद हैं, उपनिषद् हैं, पुराण हैं, गीता हैं, योग हैं, तप हैं, जप हैं, सारे धर्म-कर्म हैं और सब कुछ जनार्दन ही हैं। श्रीगुरुदेव का नाम मात्र ही मेरा वेद-शास्त्र है और इस मनोभावना का मर्म भी गुरुसेवा से कृतार्थ होने पर ही शिष्य को अनुभव होता है। गुरुसेवा, गुरुनाम और गुरुकृपा में इतनी प्रचंड शक्ति है कि उसके समक्ष अन्य सभी साधन फीके पड़ जाते हैं। शास्त्र अध्ययन से जो बोध न होता, वह मुझे गुरुसेवा, गुरुकृपा से सहज ही प्राप्त हो गया।

सचमुच निज मुक्ति की परवाह किए बगैर सिर्फ गुरुसेवा के प्रभाव व प्रसाद से ही संत एकनाथ को सब कुछ सहज ही प्राप्त हो गया। ब्रह्मज्ञान और ब्रह्मप्राप्ति भी उनके लिए उनके घर का खेल हो गया। जो सच्चे मन से, पूर्ण श्रद्धा व विश्वास के साथ अपने गुरु की सेवा करता है, उनके बताए मार्ग पर चलता है, गुरुकार्य को भगवत्कार्य समझकर करता है, सतत गुरु का नाम स्मरण व ध्यान करता है, परमात्मभाव से गुरु का पूजन करता है; उसके हृदयांगन में ब्रह्म स्वयं ही आकर खेलते हैं और उसे ब्रह्मानंद से आप्लावित कर देते हैं।

वह काम, क्रोध, मद, मोह, दंभ, दुर्भाव, द्वेष आदि दुर्भावों, दुर्गुणों से मुक्त हो जाता है और उसमें करुणा, प्रेम, संवेदना, क्षमा, शांति, समता आदि दैवी गुण, दैवी भाव स्वतः ही उभर आते हैं और उसके लोक-परलोक, दोनों ही सँवर जाते हैं।

उसके अंतरतम में भगवान अठखेलियाँ कर उसे आह्लादित करते हैं, पूर्ण करते हैं, निहाल करते हैं। हम भी ऐसी ही गुरुभक्ति क्यों न करें, जिससे हमारा जीवन भी धन्य हो सके, निहाल और पूर्ण हो सके। सचमुच बड़ी अद्‌भुत है गुरुभक्ति की महिमा। ❑

चंदनगढ़ का राजा अत्यंत शक्तिसंपन्न था। उसका राज्य दूर-दूर तक फैला हुआ था, परंतु राज्य विस्तार की चाहत में उसने अनेकों छोटे राज्यों को पददलित किया था, जिसके कारण उसके शत्रुओं की संख्या भी कम न थी। आएदिन उस पर प्राणघातक प्रहार होते रहते थे। उसने अपनी समस्या कुलगुरु के समक्ष रखी।

वे बोले—"राजन्! राजा की कीर्ति राज्य के क्षेत्रफल से नहीं, वरन वहाँ रहने वाली प्रजा की आत्मिक संतुष्टि से तय होती है। तुम धर्मनिष्ठ जीवन जिओ, प्रजा के हित के लिए कार्य करो, सबको रोजगार प्रदान करो, उनके शिक्षा-स्वास्थ्य एवं समग्र विकास के लिए योजनाएँ क्रियान्वित करो तो तुम शत्रुओं के स्थान पर हितैषियों से स्वयं को सुरक्षित पाओगे। विश्वविजेता के स्थान पर प्रजावत्सल कहलाओ—इसी में तुम्हारा कल्याण है।" यह सुनकर राजा के जीवन की राह बदल गई।

पर्व विशेष-स्वामी विवेकानंद पुण्यतिथि

नूतन भविष्य के प्रवक्ता स्वामी विवेकानंद

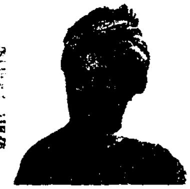

उठो! जागो! और तब तक मत रुको, जब तक कि लक्ष्य प्राप्त नहीं हो जाता—यह स्वामी विवेकानंद का सर्वाधिक प्रसिद्ध वाक्य है। जितनी बार भी पढ़ें, 10-12 शब्दों का यह छोटा-सा वाक्य हर बार हमको जोश और ऊर्जा से भर देता है और इसलिए यह युवाओं के बीच सर्वाधिक लोकप्रिय उद्धरणों में शामिल है। वैसे ही, जैसे गांधी जी का कथन कि तुम स्वयं ही वह परिवर्तन बनो, जो तुम देखना चाहते हो।

स्वामी विवेकानंद भारत की धार्मिक परंपरा के उन चुनिंदा महापुरुषों में से एक हैं, जो समाज के लिए श्रद्धा के पात्र होने के साथ-साथ युवाओं के लिए 'आदर्श' बन गए।

धर्म और परंपरा के बारे में गहरी अंतर्दृष्टि रखने वाले स्वामी जी किस तरह अपने समय, परिवेश और पृष्ठभूमि से बहुत दूर, बहुत आगे की सोच सके, वह अगम रहस्य का विषय तो है ही साथ ही यह उनकी बेमिसाल मेधा और दूरदृष्टि को भी जाहिर करता है।

वैश्वीकरण और उदारीकरण के दौर में एकदूसरे की आवश्यकताओं को समझना, सहयोग करना और लाभ उठाना अलिखित सिद्धांत के समान है। भारत ने इस प्रक्रिया में देर से प्रवेश किया, लेकिन स्वामी जी तो प्रकृति से ही अन्वेषक थे और दूसरों के प्रति खुले विचार रखते थे।

वे अकेले आध्यात्मिक महापुरुष हैं, जो यह मानने पर विवश करते हैं कि परंपरा और आधुनिकता के बीच तालमेल संभव है। धर्म-संस्कार और विकास के बीच वैसा विरोधाभास नहीं है, जैसा बहुत से लोग मानते हैं। संभव है यह धारणा रखने वालों ने धर्म के मर्म को न समझा हो। अच्छे बनो और अच्छा करो, यही धर्म है।

150 साल पहले कोलकाता में नरेंद्रनाथ दत्त के रूप में जन्म लेने वाले स्वामी विवेकानंद की सोच, उनका दर्शन और धार्मिक व्याख्याएँ चौंकाने की हद तक आधुनिक और स्पष्ट हैं। 21वीं सदी के भौतिकवादी, अर्थप्रधान, पेशेवराना माहौल में उनको पढ़ना उस तरह असहज नहीं लगता, जैसे सौ-दो सौ साल पुराने दौर के दूसरे धार्मिक व्यक्तित्वों का अध्ययन लगता है। पृष्ठभूमि धार्मिक होते हुए भी उनकी सोच प्रगतिशील और भविष्य की ओर देखने वाली है।

प्रासंगिक तो वे हैं ही, सूचना प्रौद्योगिकी से लेकर राजनीति और कारोबार से लेकर विज्ञान के क्षेत्र में सक्रिय युवा को भी वे पंक्तियाँ बहुत कुछ सिखाएँगी जिन्हें स्वामी जी ने सौ या सवा सौ साल पहले लिखा था।

स्वामी जी के धार्मिक और सामाजिक पक्ष पर बहुत लिखा गया है, लेकिन अपने व्याख्यानों, धार्मिक चर्चाओं और लेखन के दौरान जिस तरह वे नेतृत्व क्षमता, नवाचार, प्रबंधन, सफलता और वैज्ञानिक सोच के पाठ पढ़ा गए, उन्हें जानना जरूरी है।

स्वामी जी की कई शिक्षाएँ बड़े बिजनेस स्कूलों में पढ़ाने वाले आधुनिक मैनेजमेंट गुरुओं की याद दिला देती हैं। किसी आध्यात्मिक, दार्शनिक व्यक्तित्व में इस तरह का पहलू अद्भुत ही नहीं, दुर्लभ भी है अन्यथा कौन-सा धार्मिक नेता कहता

है कि जब अंधविश्वास प्रवेश करता है तो बुद्धि विदा हो जाती है।

युवाओं की राजनीति करने वाले नेताओं को भारत की जमीनी हकीकतों को जानने के लिए स्वामी जी की जीवन-दृष्टि को समझना चाहिए। जून 1894 में मैसूर के महाराजा को लिखे पत्र में उन्होंने लिखा था कि भारत में बुराइयों की जड़ गरीबों की हालत में निहित है। हमारे निम्नवर्गों को ऊपर उठाने के लिए सबसे जरूरी है उन्हें शिक्षित करना और उनकी खोई हुई निजता को बहाल करना। धार्मिक-राजनीतिक ताकतों और विदेशी राजसत्ता ने सदियों से उनका इतना दमन किया है कि भारत के गरीब भूल गए हैं कि वे भी इनसान हैं। जार्ज बर्नार्ड शॉ ने भी तो निर्धनता को सबसे बड़ी बुराई और सबसे बड़ा अपराध करार दिया था।

अर्थशास्त्र का नोबेल पुरस्कार जीतने वाले अमर्त्य सेन क्या कहते हैं—इसे अनुभव करना मुश्किल नहीं है कि ''असमानता का अन्याय असहिष्णुता को जन्म दे सकता है और गरीबी का कष्ट क्रोध तथा हिंसा को।''

सेन शिक्षा के बारे में भी स्वामी जी के विचार से परोक्ष सहमति जताते हैं—भारतीय अर्थव्यवस्था 6-7, यहाँ तक कि 8-9 फीसदी की सालाना दर से भी विकसित हो सकती है, लेकिन उदारीकरण का लाभ तब तक आम लोगों से दूर ही रहेगा, जब तक कि उन्हें बुनियादी शिक्षा मुहैया नहीं कराई जाती। आधारभूत स्तर पर मजबूत शिक्षा तंत्र के बिना भारत के लिए उदारीकरण की रफ्तार के साथ तादात्म्य स्थापित करना कठिन होगा।

दोनों बयानों की तारीखों में 100 से भी अधिक वर्ष का अंतर है। दोनों के संदर्भ अलग-अलग हैं, लेकिन संदेश एक है। नेतृत्व क्या है? उसकी सार्थकता क्या है? यदि वह आम आदमी के जीवन को बेहतर न बना सके? स्वामी जी का हर शब्द समाज में दिखती विषम परिस्थितियों का प्रतिकार करता प्रतीत होता है—जब तक करोड़ों लोग गरीबी और असहाय स्थिति में हैं, मैं ऐसे हर शख्स को गद्दार मानकर चलता हूँ, जिसने उनकी कीमत पर शिक्षा पाई, लेकिन उनकी न्यूनतम सुध भी नहीं ली।

इतने प्रबल विचारों वाला व्यक्ति संन्यासी न होता तो क्या होता? शायद एक महान क्रांतिकारी, अद्भुत नेता, विलक्षण व्यक्ति। नए दौर के नेता उनसे नेतृत्व का ककहरा सीख सकते हैं। अपने समय की वास्तविकताओं की समझ रखे बिना कोई नेतृत्व सार्थकता प्राप्त नहीं कर सकता। भारत की आधी आबादी युवाओं की है और इतनी बड़ी शक्ति की बदौलत किसी भी देश का कायाकल्प संभव है, लेकिन तभी जब इन युवाओं के सामने स्पष्ट उद्देश्य तथा दिशा मौजूद हो और उन्हें अपने दायित्वों का एहसास हो।

स्वामी जी युवकों के आदर्श इसलिए बने; क्योंकि उन्होंने उन्हें यही शिक्षा प्रदान की। व्यक्ति, राष्ट्र, विश्व और धर्म के संदर्भ में उनकी प्राथमिकताएँ इतनी स्पष्ट थीं कि लगता है वे कोई समाजशास्त्री हों।

स्वामी जी ने कहा—व्यावहारिक देशभक्ति, केवल एक भावना या मातृभूमि के प्रति प्रेम की अभिव्यक्ति मात्र नहीं है। देशभक्ति का अर्थ है अपने साथी देशवासियों की सेवा करने का अपार जज्बा, किंतु वे मन से एक विश्वमानव थे, जिनकी आकांक्षा पूरे विश्व को एक परिवार के रूप में देखने की थी।

यह स्वामी जी की यात्राओं से भी स्पष्ट है, जो हिंदुत्व के प्रति समझ-बूझ का प्रसार करने के लिए तो थी हीं, वैश्विकता के अन्वेषक के रूप में

भी थीं। देशभक्ति और वैश्विकता के बीच भी उनके विचारों में कहीं कोई भ्रम नहीं दिखता—आवश्यकता पड़े तो उस एक भावना के लिए हर चीज का बलिदान कर देना चाहिए, जिसे वैश्विकता कहते हैं। राष्ट्र और विश्व के संदर्भ में उनके अलग-अलग किंतु बहुत स्पष्ट विचार थे।

सूचना प्रौद्योगिकी प्रधान युग में भौगोलिक सीमाएँ धूमिल होती चली जा रही हैं। वैश्वीकरण और उदारीकरण के दौर में एकदूसरे की आवश्यकताओं को समझना, सहयोग करना और लाभ उठाना अलिखित सिद्धांत के समान है। भारत ने इस प्रक्रिया में देर से प्रवेश किया, लेकिन स्वामी विवेकानंद तो प्रकृति से ही अन्वेषक थे और दूसरों के प्रति खुले विचार रखते थे। आईटी, सेवा, उद्योग, आयात-निर्यात और पर्यटन जैसे क्षेत्रों को ध्यान में रखा जाए तो उनका यह कथन कितना प्रासंगिक लगता है—हमें यात्रा अवश्य करनी चाहिए, हमें विदेशी भूमियों पर जाना चाहिए।

हमें देखना चाहिए कि दूसरे देशों में सामाजिक तौर-तरीके और परिपाटियाँ क्या हैं। दूसरे देश किस दिशा में सोच रहे हैं, यह जानने के लिए हमें उनके साथ मुक्त और खुले संवाद से झिझकना नहीं चाहिए।

जब गांधी जी विदेश जा रहे थे तो परिवार में उनका विरोध हुआ था। जयपुर के महाराजा तो जब लंदन गए तब गंगाजल से भरे चाँदी के दो विशाल कलश साथ लेकर गए थे, ताकि विदेशी पानी पीकर भ्रष्ट न हों, लेकिन अपने समय की सोच से कितने आगे थे स्वामी विवेकानंद और इसी सोच ने उन्हें महापुरुष बनाया। ❑

अमेरिका के राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन से मिलने उनका एक मित्र पहुँचा। उसने देखा कि राष्ट्रपति लिंकन स्वयं अपने जूतों की पॉलिश कर रहे हैं। इतने बड़े देश के राष्ट्रपति को स्वयं अपने जूतों की पॉलिश करते देख उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

अपने मन में उठती जिज्ञासा को वह रोक न सका और उसने राष्ट्रपति लिंकन से पूछा—"मित्र! तुम अपने जूते क्या स्वयं पॉलिश करते हो ? तुम तो दुनिया के सबसे शक्तिशाली देश के राष्ट्रपति हो—ये काम करने वाले तो तुम्हें सैकड़ों मिल जाएँगे।"

राष्ट्रपति लिंकन ने उत्तर दिया—"मित्र! अपने जूते दूसरों से पॉलिश करवाने के लिए मैं इस देश का राष्ट्रपति नहीं बना हूँ। यदि मैं स्वयं अपने कार्यों को करने के लिए दूसरों पर आश्रित रहूँगा तो समाज को क्या दिशा और देशवासियों को क्या संदेश दे पाऊँगा ? परिश्रम और स्वावलंबन से ही देश का उत्कर्ष होता है।" लिंकन की बातें सुनकर उनके मित्र का हृदय गौरव से भर उठा कि उनके देश का राष्ट्रपति कितनी ऊँची सोच और कितने विशाल हृदय वाला है। सत्य यही है कि मनुष्य दूसरों पर आधिपत्य दिखाने से नहीं, वरन अपने गुणों को श्रेष्ठ बनाने से महान बनता है।

बंधनमुक्त हो हमारा जीवन

मानवीय चेतना का यह स्वभाव है कि वह हर विचार-वस्तु से अपना तारतम्य स्थापित करने में सक्षम है अर्थात उसे किसी भी विषय को स्वीकारने में तनिक भी देर नहीं लगती। कारण, कि वह बहुत समय से अभ्यस्त है एक निश्चित ढर्रे पर कार्य करने हेतु।

उसकी पीड़ा यह है कि वह कर्म में लगती तो है, पर अपने वास्तविक-स्वभाव में अटल स्थिति होने में उसे विषय-संयोग बाधा पहुँचाते हैं। उसकी महत्ता इसी में है कि वह अपने आप को कुप्रभावों से रहित करे, चाल-चलन के पार देखने का अभ्यस्त हो तथा जीवन को अधिक रस-युक्त बना सच्चे अर्थों में उसे नवीन बनाए।

जिस दृष्टिकोण से चेतना परिष्कृत होती है, वह और कोई नहीं, उसका गुण-कर्म-स्वभाव का परिष्कार ही है। इसे ही हम आत्मिकी के विकास की प्राथमिक आवश्यकता कहते हैं। जीवन का यथार्थ-पथ वही है, जो इस दृष्टिकोण को विकसित करता जाए, तथा जीवन से हर प्रकार के बंधन को मिटा; उसे स्वच्छ, निर्मल एवं पवित्र भी बनाता जाए।

जीवन बंधनग्रस्त कब होता है? जब उसे अपनी दिशा का पता नहीं लगता, जब वह अंधकार में यों ही रमण किया करता है, उसकी प्रतिभा का जागरण किसी सदुद्देश्य की प्राप्ति में नहीं हो पाता। हमें अपना जीवन ऐसा बनाना चाहिए, जो यथार्थ में जीवन-संपदा का सच्चा सदुपयोग कर सके। इसके लिए आवश्यक है हमारी बंधनों एवं कुप्रभावों से विरक्ति तथा अनुकूल प्रयोजन को समझ उस दिशा में हमारा आगे बढ़ना।

जीवन का सत्य-पथ वही है, जो विवेक की अश्रु-धारा से निकला हो, जिसे बनाने में आत्मा का धैर्य एवं पुरुषार्थ लगा हो, जो सच्चे अर्थों में हमें नवीन बनाए तथा चाल-चलन से परे सत्य के एकाधिकार में ले।

हमारा जीवन किस महान दृष्टिकोण को अंगीकार करे इसे समझना हो तो एक काम करें। चुपचाप अकेले में यथावस्तु बैठ जाएँ। देखें कि क्या ऐसा है जो रोक रहा है हमें अपनी वास्तविक-क्षमता के प्रदर्शन हेतु, फिर उपाय ढूँढ़ें कि किस मार्ग से हम आगे चलें, ताकि जीवन का सच्चा सदुपयोग अपनी प्रेरणा के वशवर्ती हो सके।

जीवन यथार्थ में उसी का बना है, जिसने अपनी आत्मा के दिव्य-संसर्ग को कौड़ियों के भाव नहीं बेचा, जो इस सत्य से परिचित हो गया कि जीवन का एकांत-पथ किसी और पर निर्भर नहीं, उसे तो स्वयं के ही दिशाचलन से पार किया जा सकता है। जीवन की यह अद्भुत महानता है कि उसे किसी अन्य का नहीं, एकमात्र सत्य का आशीष तथा प्रेरणा का अनुपुँज चाहिए।

प्रेरणा जितनी महान होगी जीवन उतना ही निखरता चला जाएगा। अंततः उसे उस सुखसागर में वो मिलेगा, जिसे परमात्मा कहते हैं। इसलिए पूर्व-तैयारी रखिए, सभी कंटकाकीर्ण परिस्थितियों को, स्वयं की अनदेखी में हुए क्रिया-कृत्यों को

तथा मार्ग की अनेकानेक बाधाओं को हटाइए और यथार्थ पथ का अनुसंधान करिए।

देखिए कि इस जीवन का मूल कहाँ पर है और उसे कैसे सुधारा जाए। हमारा जीवन विशाल बनेगा तभी, जब वह आत्मप्रेरणा से संयुक्त हो, उसकी रीति-नीति अंतरंग के उत्साह, उमंग तथा दृढ़ता से प्रेरित हो तथा सच में वह विशुद्ध-प्रज्ञा का वाहक बने।

जीवन की इस विशाल दृष्टि से सच में कितने अद्‍भुत परिणाम उपस्थित किए जा सकते हैं इसे तो कोई वास्तविक पथिक ही समझ सकता है। जीवन का केंद्रीय रस इस दिव्य भावना में ही है, जिसे समझने एवं अपनाने के उपरांत जीवन पूर्णत: नवीन हो जाता है, उसके सारे कष्ट तथा पीड़ाएँ क्षण भर में समाप्त हो जाती हैं तथा उसका वास्तविक आलोक दिखने लगता है।

जीवन के दिव्य रथ को तपस्या से निखारिए, प्रत्येक परिस्थिति के पीछे की मन:स्थिति का अवलोकन प्राप्त करें तथा आदर्श पथ पर बढ़ने में तनिक भी संकोच न करें। यही बंधनमुक्ति का मार्ग है तथा एक आदर्श, सफल एवं सार्थक जीवन की पहचान भी।

उसे जिसने समझ लिया वह फिर देखा-देखी नहीं करता है, उसे अपनी आंतरिक दृढ़ता पर पूर्ण विश्वास होता है तथा जीवन-पथ कंटकाकीर्ण होने पर भी आदर्श एवं दिव्य कहलाता है।

हमें विकास का वास्तविक पथ तलाशना चाहिए। बंधनों को गलाकर, स्वयं को संपूर्ण रूप से जागरूक कर तथा आदर्श एवं महान पथ पर चलने की पूर्ण मन से ठाननी चाहिए।

जिसका जीवन द्वंद्वों में फँसा रह गया, वह अपनी आधी शक्ति को गँवा बैठता है। इसलिए प्रबंध यह करना चाहिए कि जीवन किसी प्रकार भी विकार-ग्रस्त न हो, उसे बंधन को न स्वीकार आदर्श-प्रेरणा को स्वीकारना चाहिए तथा उसका वास्तविक विकास-पथ प्रेम एवं अनुकंपा के सिद्धांत पर चलना चाहिए।

जीवन दिव्य बनेगा तभी, जब वह यथार्थ-पथ का अनुसंगी हो, अन्यथा जीवन की विराट संपदा को हम किस प्रकार निस्तेज प्रयोजनों में, आत्मा के हनन करने वाले क्रिया-कृत्यों में तथा अदूरदर्शी सोच के तले आदर्श जीवन-निर्माण की प्रेरणा से विलग एक निश्चित ढर्रे पर चलाए रखते हैं, यह महत्त्व का विषय है।

इसके पतन को रोकना है तो आत्मा की सुनना आरंभ करें, वह जो बताए उसे पूर्ण निश्चल-मन से ग्रहण करिए तथा जीवन-निर्माण की प्रयोग-प्रक्रिया में संलग्न होइए। यही आदर्श जीवनक्रम का तथा अपनी आत्मसत्ता की पूजा-अर्चना का यथार्थ पथ है तथा इस पर चलकर जीवन धन्य एवं निहाल हो जाता है। ❑

अखण्ड ज्योति पत्रिका हेतु बैंक खातों का विवरण

जमा रसीद की प्रति एवं विवरण ई-मेल, पत्र द्वारा भेजें; अन्यथा राशि का समायोजन नहीं हो पाएगा।

Beneficiary –	Akhand Jyoti Sansthan	I.F.S. Code	Account No.
S.B.I.	Ghiya Mandi Mathura	SBIN0031010	51034880021
P.N.B.	Chowki Bagh Bahadur, Mathura	PUNB-0183800	1838002102224070
I.O.B.	Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura	IOBA0001441	144102000000006

विदेशी धन बैंक में सीधे जमा न करें, ड्राफ्ट द्वारा भेजें।

अद्भुत व्यक्तित्व के धनी—संत कबीर

कबीर भारतीय धर्म समाज के प्रथम विद्रोही संत हैं। उनका विद्रोह अंधविश्वास और अंधश्रद्धा के विरोध में सदैव मुखर रहा है। महात्मा कबीर के प्राकट्यकाल में समाज ऐसे चौराहे पर खड़ा था, जहाँ चारों ओर धार्मिक पाखंड, जात-पाँत, छुआछूत, अंधश्रद्धा से भरे कर्मकांड तथा पंडित-पुरोहितों का ढोंग और सांप्रदायिक उन्माद चरम पर था। आम जनता धर्म के नाम पर दिग्भ्रमित थी। मध्यकाल जो कबीर की चेतना का प्राकट्यकाल है, पूरी तरह सभी प्रकार की संकीर्णताओं से आक्रांत था।

धर्म के स्वच्छ और निर्मल आकाश में ढोंग-पाखंड, हिंसा तथा अधर्म व अन्याय के बादल छाए हुए थे। उसी काल में अंधविश्वास तथा अंधश्रद्धा के कुहासों को चीरकर कबीररूपी दहकते सूर्य का प्राकट्य भारतीय क्षितिज पर हुआ। वैसे संत कबीर के जीवन वृत्तांत का स्पष्ट पता नहीं चलता, परंतु विभिन्न साक्ष्यों के आधार पर कबीर का जन्म विक्रम संवत् 1455 तथा मृत्यु विक्रम संवत् 1575 माना जाता है। जिस तरह माता सीता के जन्म का पता नहीं चलता, उसी तरह कबीर के जन्म का रहस्य आज भी भारतीय लोकमानस में जीवंत है।

कबीर सामान्य जन के संत हैं। वे आम जनता से अपनी बात पूरे आवेग और प्रखरता के साथ करते हैं, इसलिए कबीर परमात्मा को देखकर बोलते हैं। आज जिस युग में हम जी रहे हैं, वहाँ जातिवाद, धार्मिक पाखंड का बोलबाला है। सांप्रदायिकता की आग में झुलसता जनमानस एवं तंत्र-मंत्र के मिथ्या भ्रम-जाल से समाज आज भी उबर नहीं पाया है।

600 वर्षों के सुदीर्घ प्राकट्यकाल के बाद भी कबीर हमारे वैयक्तिक एवं सामाजिक जीवन के लिए बेहद प्रासंगिक एवं समीचीन लगते हैं। वे हमारे लोकजीवन के इर्द-गिर्द घूमते नजर आते हैं। कबीर की बीजक वाणी में हिंदू और मुस्लिम के साथ-साथ ब्रह्मांड के सभी लोगों को एक ही धरती पर प्रेमपूर्वक आदमी की तरह रहने की हिदायत देते हैं।

वे कहते हैं—

'वो ही मोहम्मद, वो ही महादेव, ब्रह्मा आदम कहिए,

को हिन्दू, को तुरूक कहाए, एक जिमि पर रहिए।'

कबीर मानवीय समाज के इतने बेबाक, साफ-सुथरे निश्चल मन के भक्त कवि हैं, जो समाज को स्वर्ग और नरक के मिथ्या भ्रम से बाहर निकालते हैं। वे काजी, मुल्ला और पंडितों को साफ शब्दों में दुत्कारते हैं—**'काजी तुम कौन कितेब बखानी, झंखत बकत रहहु निशि बासर, मति एकऊ नहीं जानी। दिल में खोजी देखि खोजा दे, बिहिस्त कहाँ से आया?'**

कबीर ने घट-घटवासी चेतन तत्त्व को राम के रूप में स्वीकार किया है। उन्होंने राम को जीवन आश्रय माना है, इसीलिए कबीर के बीजक में चेतन राम की 170 बार अभिव्यंजना हुई है। कबीर आज भी दहकते अंगारे हैं। कानन-कुसुम भी हैं कबीर, जिनकी भीनी-भीनी गंध और सुवास नैसर्गिक रूप से मानवीय अरण्य को सुवासित कर

रही है। हिमालय से उतरी हुई गंगा की पावनता भी हैं कबीर।

संत कबीर भारतीय मनीषा के भूगर्भ के फौलाद हैं, जिसकी चोट से ढोंग, पाखंड और धर्मांधता चूर-चूर हो जाते हैं। संत कबीर भारतीय संस्कृति का वह हीरा हैं, जिसकी चमक नित नूतन और शाश्वत है। संत कबीर ने कहा है—**'सांच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप'** अर्थात सच बोलने के समान कोई तपस्या ही नहीं हो सकती और झूठ बोलने जैसा कोई पाप नहीं है। हम चाहे अपने आप को कितना भी धार्मिक कहलाएँ, किंतु अगर हम सच बोलने के पलड़े पर अपने आप को रखें तो हमें अपने आप ही पता लग जाएगा कि हम कहाँ पर खड़े हैं। आज की विषम परिस्थितियों में भी संत कबीर की वाणी, व्यक्तित्व और शिक्षाएँ इस तमसाच्छादित समाज को प्रकाशित करते हैं। उनका जीवन आज भी अनेकों के लिए प्रेरणा है और सदा बना रहेगा। ❑

आजीवन सदस्य कृपया ध्यान दें

आपने जब आजीवन सदस्यता स्वीकार की थी, तब से अब तक महँगाई इतनी अधिक बढ़ चुकी है कि पत्रिका की आजीवन सदस्यता का निर्वहन कर पाना कठिन हो रहा है। अब पूर्व की सुरक्षानिधि में आजीवन सदस्यता बनाए रखना संभव नहीं जान पड़ता। जो सदस्य रुपये 150 (सन् 1982) में बने थे, उन्हें अभी तक पत्रिका भेजी जा रही है; जबकि वार्षिक चंदा रुपये 15 (सन् 1982) से बढ़कर रुपये 300 हो गया है—भविष्य में और बढ़ता रहेगा। ऐसी स्थिति में आजीवन सदस्यता को पुरानी शर्तों पर जारी नहीं रखा जा सकेगा।

अब नई व्यवस्था के अनुसार आजीवन सदस्यता 20 वर्ष तक सीमित रहेगी। उसका अब चंदा रुपये 6000/- होगा। हम सबकी यही अपेक्षा है कि जो श्रद्धा-स्नेह का संबंध लंबे समय से बना हुआ है, वह और भी प्रगाढ़ होगा। अत: निम्न विकल्प प्रस्तुत कर रहे हैं—

(1) आपका आजीवन शुल्क जो भी जमा है, उसे काटकर शेष रुपया और भेज दें, ताकि आपकी आजीवन सदस्यता (20 वर्षीय) बनी रहे। राशि बैंक ड्राफ्ट/चैक/RTGS/NEFT से भेजी जा सकती है। राशि भेजने के लिए बैंकों का विवरण पत्रिका में पृष्ठ सं. 14 पर दिया गया है।

(2) आपकी आजीवन सदस्यता समाप्त कर दी जाए एवं जमा सुरक्षानिधि वार्षिक चंदा में ट्रांसफर कर दी जाए। उस राशि से वार्षिक चंदा रुपये 300/- के हिसाब से जब तक का चंदा बने अखण्ड ज्योति भेज दी जाए।

(3) यदि किन्हीं कारणोंवश ऐसा संभव न हो पा रहा हो तो अपने बैंक खाते की जानकारी भेजने का अनुग्रह करें, जिससे आपको राशि वापस भेजी जा सके। विवरण मिलने पर आपके खाते में सीधे रुपया भेज दिया जाएगा।

पत्र व्यवहार में अपनी सदस्य संख्या, नाम, पता, फोन नंबर, ई-मेल का उल्लेख अवश्य करें।

आप सबको पत्र द्वारा सूचित किया जा चुका है, संभव है किसी कारणवश पत्र न मिला हो। अपनी सहमति का पत्र डाक/ई-मेल द्वारा भेजने का अनुग्रह करें।

यह सूचना गत 7 मास से निरंतर जा रही है—इसका उत्तर नहीं मिल रहा है। समझा जा सकता है कि या तो पाठकों की इसमें रुचि नहीं है—अथवा अन्य कोई कारण है। अत: आगामी मास से अखण्ड ज्योति भेजना बंद किया जा रहा है।

अहं को मिटाने का मार्ग है अध्यात्म

हम सब के भीतर एक संकुचित तत्त्व बैठा है, जिसे **अहं** कहते हैं। वह संकुचित इसलिए है, क्योंकि वह कभी पूर्ण नहीं हो सकता, फिर भी उसकी उड़ान है कि मैं बड़े-से-बड़ा बन जाऊँ, ज्ञान से बड़ा, धन से बड़ा, प्रतिष्ठा और सम्मान से बड़ा, बाहरी रंग-नाच में सर्वाधिक कुछ कर गुजरने में सबसे ज्यादा बड़ा।

अहं कहता है कि मैं छोटा इसलिए हूँ; क्योंकि दुनिया कहती है। परमात्मा कहता है कि तू बड़ा इसलिए है; क्योंकि तू मेरा ही पुत्र है। मेरे अधिकार में तेरा निवास है तथा तू जो कुछ भी करता है, उसे मेरी आज्ञा का पालन मान। अहं की दुनिया बड़ी सिमटी हुई है, उसे अधिक समझने में आदमी को बड़ा परिश्रम करना पड़ता है, परंतु होती वह रत्ती-सी ही है।

आत्मा जानती है कि मैं कौन हूँ तथा मुझे क्या दायित्व सौंपे गए हैं, मेरा अस्तित्व किस चीज से है तथा मेरी दुनिया में रंगत किस प्रकार आती है। अहं और आत्मा की लड़ाई में आत्मा ही जीतती है; क्योंकि वह निर्विकार है, उसे देखा नहीं जा सकता न सुना ही; मात्र उसकी प्रतिच्छवि हमारे क्रिया-कृत्यों में तथा हमारे आदर्शों में दिखाई देती है।

अहं का सारा व्यापार आत्मा को पाने के लिए है, ऐसे में यदि उसे कुछ चाहिए तो मात्र अपनी अस्मिता की रक्षा से छुटकारा तथा जीवन को नित-नवीन बनाने का संकल्प। अहं कभी आत्मा नहीं बन सकता और आत्मा अजेय है, शायद उसे पहचानने की सामर्थ्य अहं में कभी विकसित भी न हो पाए।

आत्मा का ज्ञान हमें महान बलशाली बनाता है तो अहं का निरंतर-व्यापार मानव चेतना के पतन का कारण बनता है। अहं से कोई क्रांति नहीं होती, इसलिए अहं भीतर-बाहर सब जगह दुबला है। उसे परिष्कार की यात्रा तय करनी है तो एकमात्र अपने सत्य को पहचान के जो कि आत्मा है। अहं के गलने से आत्मा के जागरण तक की यात्रा को ही अध्यात्म कहते हैं।

भेद यह है कि जो पूर्ण नहीं, वह पूर्णता की दिशा में बाहर कुलाँचे मारता फिरता है और जो सत्य-वस्तु है, वह उसके अधिकार में नहीं रहती है। यही अहं की अंतिम परिणति तथा आत्मा के जागरण का सूचक है।

जब अहं अपनी चाल-ढाल आत्मा के दिशा कदमों पर व्यर्थ बातों को त्यागकर सत्य के साहचर्य में तथा आनंद की यात्रा में देखता है तो धीरे-धीरे अहं का विस्तार होकर वह आत्मरूप या कहें परिपूर्णता के सदृश हो जाता है।

यही अहं के आत्मा बनने का प्रतिचिह्न है तथा इससे जीवन में अद्‌भुत क्रांति घटित होती है, जैसे कि पूरी दीवार ही हिल गई हो, देखने को कुछ बचा ही नहीं, प्रेम-ही-प्रेम चारों ओर लहरा रहा है, कृपा और अनुकंपा की वर्षा हो पड़ी है।

इस दिव्य प्रेम को ही समाधि कहा गया है तथा इससे जीवन का उत्कृष्ट स्वरूप सामने आता है, जिसे समझने के उपरांत जीवन अधूरा या निष्प्राप्य नहीं रह जाता।

अहं की मुक्ति ही आत्मा की प्राप्ति है, तथा जिस भी रूप में अहं ऐसा करने में सफल हो सकता है, वही वास्तविक अध्यात्म का विषय है। अहं की जटिलता को समझते-समझते हम थक जाएँगे तथा यात्रा कभी पूरी नहीं होने वाली। इसके दूसरी तरफ आत्मा का सरोवर ऐसा है, जिसे एक बार छू लिया जाए तो जीवन का कायाकल्प होते देर नहीं लगती।

अहं की मुक्ति ही अध्यात्म है, जो टूट गया है उसे फिर से जोड़ना, जो दुष्प्राप्य है उसे सहज बनाना तथा अपनी आत्मा की उत्कृष्ट गति को प्राप्त करना, यही अहं का विषय है। जीवन को जिन्होंने सही रीति-नीति से जिया है, उसे पूर्ण-परिष्कार के मार्ग पर अग्रसर किया है, वे समझ पाए हैं कि आत्मा कभी विनष्ट नहीं हो सकती तथा अहं को टूटने में देर नहीं लगती।

अहं अपनी मुक्ति स्वयं चाहता है, इस बात का अंदाजा हम इस छोटे-से प्रसंग से निकाल सकते हैं कि जब भी अहं को चोट पहुँचे तो वह तिलमिला कर आत्मा के पास ही पहुँचता है, यही जीवन की वह गहराई है, जिसके समीप जाकर सच में जीवन आदर्श एवं महान बन सकता है। जो कुछ भी हमें इसके लिए रोके, पीछे हटने को कहे तथा जिससे चरित्र निर्बल कहा जाए, वह त्याज्य है तथा उसके स्थान पर हमें आत्मप्रधान क्रियाप्रणाली को स्थान देना चाहिए।

यही अहं को आत्मा से मिलाने का विज्ञान है, तथा इस पर चल कर आत्मा पूर्णरूप से शुद्ध हो जाती है, आदर्श एवं महान कहलाती है। इसे जिसने समझ लिया, वह जीवन को एक ही सिद्धांत से देखता है कि मेरा अहं मेरे सत्प्रयोजनों के मध्य न आए, मेरा स्थूल स्वभाव मेरी आत्मा के सत्य-स्वरूप को बाधित न करे और वह यह चाहता है कि मेरा जीवन प्रकाश का, सौंदर्य एवं महानता का प्रतीक-प्रतिनिधि बने।

जिस विधा से जीवन में कल्याण का मार्ग प्रशस्त होता है, जीवन धन्य एवं निहाल बनता है वह और कोई नहीं, अहं का आत्मा में विसर्जन ही है। उसे ही चरितार्थ करने जीवन-समर में हमें लड़ना पड़ता है, जीवन की बारीकियों से निपटना पड़ता है, जीवन को उच्च प्रयोजन के लिए समर्पित करना होता है।

यही अहं और आत्मा की लड़ाई का अंत है तथा इससे जीवन में दिव्य सौंदर्य एवं दिव्य अभीप्सा का जन्म होता है। जिस किसी के पास आत्मावलंबन का मूल आधार आत्मसमर्पण है, वह व्यक्ति किसी प्रकार भी जीवन के प्रगति-पथ से वंचित नहीं हो सकता।

यही आत्मविज्ञान है। ❑

छोटे बालक ने माँ से पूछा—''माँ! कौआ और कोयल, दोनों ही काले हैं, पर लोग कौए को मारते और कोयल को प्यार क्यों करते हैं ?''

माँ ने उत्तर दिया—''बेटा! सम्मान रूप के आधार पर नहीं, गुणों के आधार पर मिलता है। कोयल मीठी वाणी बोलती है और अपनी इन्हीं भावनाओं की मधुरता के कारण वह सबकी प्रिय बन गई है; जबकि कौआ अप्रिय वचन बोलने के कारण स्वार्थी व धूर्त माना जाता है और जनसामान्य के सम्मान से वंचित रह जाता है।''

रूपवान अपने रूप के कारण दूसरों को क्षणिक रूप से आकर्षित जरूर कर सकते हैं, परंतु दीर्घकाल तक सम्मान के अधिकारी तो गुणवान ही होते हैं।

मैं कौन हूँ

चहुँओर वैदिक धर्म व अद्वैत ज्ञान की प्रतिष्ठा को लेकर दिग्विजयी आचार्य शंकर अपने शिष्यों के साथ विभिन्न स्थानों की यात्रा कर रहे थे। उस दिन यात्रा करते हुए वे श्रीवेली आ पहुँचे थे। श्रीवेली के श्रद्धालुओं ने आचार्य शंकर का बड़ा आदर-सत्कार किया। आचार्य शंकर पहले देवस्थान हरपार्वती के मंदिर में गए। वहाँ पूजा-अर्चना कर वे अपने विश्रामस्थल पर पहुँचे। उनके दर्शन को श्रद्धालुओं की भीड़ उमड़ पड़ी।

आचार्य शंकर ने उन्हें अद्वैत तत्त्व की सरल व्याख्या करके समझाया। ब्रह्मज्ञान के तेज से प्रदीप्त उनके मुखमंडल को देख सभी श्रद्धालु उनकी ओर सहज ही आकर्षित हो रहे थे। श्रद्धालुओं की उस भीड़ में प्रभाकर नाम के एक ब्राह्मण भी अपनी पत्नी सहित अपने तेरहवर्षीय पुत्र को लेकर आचार्य शंकर के दर्शन व आशीष की आकांक्षा लिए आए थे। प्रभाकर का पुत्र तेरह वर्ष की आयु पूर्ण कर चुका था, पर वह कुछ बोल नहीं पाता था; क्योंकि वह गूँगा था।

ब्राह्मण प्रभाकर ने आचार्य शंकर की अलौकिक शक्तियों व योगबल के बारे में सुना था। उन्हें यह आशा थी कि आचार्य शंकर की कृपादृष्टि से उनका गूँगा पुत्र भी बोलने लग सकता है। यह सोचते हुए वह कुछ फल, मिष्टान्न आदि भेंटस्वरूप शंकराचार्य के चरणों में अर्पित कर रोने लगा। प्रभाकर का गूँगा पुत्र भी शंकराचार्य के चरणों से लिपट गया।

प्रभाकर को रोते देखकर शंकराचार्य ने बड़े प्रेम से उसके सिर पर हाथ रखा और बोले— "विप्र धीरज रखो।" तब प्रभाकर ने कहा—"हे देव! इस बालक के जड़ भाव का क्या कारण है, जिसके कारण यह कुछ बोल नहीं पाता। हे देव! आप तो करुणा के सागर हैं, आप इस बालक पर करुणा कीजिए और इसे ठीक कर दीजिए। हमारा यह पुत्र कुछ बोल नहीं पाता, फिर यह वेदादि भला किस प्रकार पढ़ सकेगा। यह तो अपनी भूख-प्यास भी नहीं बता सकता। इसकी दशा देखकर हमें अत्यंत कष्ट होता है।"

प्रभाकर की बातें सुनकर शंकराचार्य ने उसके गूँगे पुत्र की आँखों में अपार करुणाभरी दृष्टि से देखा और पूछा—"हे शिशु! तुम कौन हो? तुम्हारा नाम क्या है? तुम कहाँ से आए हो? हे वत्स! तुम इन प्रश्नों के उत्तर देकर मुझे प्रसन्न करो। तुम्हें देखकर मुझे अतिशय आनंद का अनुभव हो रहा है।"

शंकराचार्य की करुणाभरी दृष्टि व स्पर्श ने मानो उस बालक में किसी दिव्य आध्यात्मिक शक्ति का संचार कर दिया और वह गूँगा बालक शंकराचार्य के ब्रह्मतेज से प्रदीप्त मुख को कुछ पल देखता रहा और फिर मधुर वाणी में बोला—"हे देव! मैं मनुष्य नहीं, कोई देवता या यक्ष भी नहीं। मैं ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र भी नहीं। मैं ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थी और संन्यासी भी नहीं। मैं मन, बुद्धि, देह या इंद्रियाँ भी नहीं। मैं तो केवल और केवल निज बोधस्वरूप आत्मा हूँ। जो मन या चक्षु आदि इंद्रियों के अगोचर हैं, मैं वही नित्य आत्मा हूँ। विविध पात्रों के जल में प्रतिबिंबित सूर्य की तरह जो प्रकाशस्वरूप में अनेक बुद्धियों के भीतर विभिन्न रूप से प्रतीयमान होता है, वही

नित्य ज्ञानस्वरूप आत्मा मैं हूँ। जो सारे प्राणियों और वस्तुओं में व्याप्त है, पर फिर भी जिसे कोई वस्तु स्पर्श नहीं कर सकती, मैं वही नित्यज्ञान स्वरूप आत्मा हूँ। जो आकाश के समान सर्वदा शुद्ध और स्वच्छ स्वरूप है, मैं वह नित्यज्ञान स्वरूप आत्मा हूँ।''

इस प्रकार संस्कृत श्लोक कहते हुए शंकराचार्य के प्रश्नों का उतर देते हुए वह गूँगा बालक बोलने लगा। शंकराचार्य के प्रश्न पर उस गूँगे बालक के मुख से इस प्रकार ज्ञान की बातें सुनकर और उसे बोलते देखकर वहाँ उपस्थित सभी लोग हतप्रभ रह गए।

शंकराचार्य ने अपने शिष्यों की ओर देखते हुए कहा—''यह बालक अवश्य ही कोई ब्रह्मज्ञ पुरुष होगा; क्योंकि तत्त्वज्ञान से पूर्ण और आत्मस्वरूप का ऐसा वर्णन साधारण मनुष्य से संभव नहीं। अवश्य ही इस बालक ने आत्मज्ञान प्राप्त कर लिया है। इस बालक के द्वारा व्यक्त यह स्तोत्र '**हस्तामलक**' नाम से प्रसिद्ध होगा और तुम सब भी आत्मस्वरूप को अभिव्यक्त व प्रकाशित करने वाले इस स्तोत्र को कंठस्थ कर लो।''

उधर अपने गूँगे पुत्र को बोलते देखकर प्रभाकर दंपती के आनंद की कोई सीमा न रही। वह आचार्य शंकर के चरणों में नतमस्तक हो गया और बोला—''हे देव! हम आपको किस प्रकार से धन्यवाद दें। आज हमारा रोम-रोम आपके इस उपकार से ऋणी हो गया।'' आचार्य बोले—''पूर्वजन्म के शुभ कर्म तथा तप के फलस्वरूप यह बालक ब्रह्मज्ञान में प्रतिष्ठित हुआ है। इसी कारण यह लौकिक बातें नहीं करता। यह गृहस्थ धर्म का पालन नहीं करेगा, और विरक्त रहेगा।''

ब्राह्मण दंपती अपने गूँगे पुत्र को बोलते देखकर जितना प्रसन्न हुए थे, उसके विरक्त भाव को जानकर उतने ही दु:खी हो गए। वे दु:खी होकर अपने पुत्र को लेकर घर आए और प्रयत्न करने लगे कि वह कुछ बोले, पर वह एक शब्द भी नहीं बोला। उसकी जननी अपने पुत्र का मुख चूमते हुए प्यार से बोली—''मेरे लाल! तुम एक बार तो अपने माता-पिता से बात कर हमारे हृदय को शांति प्रदान करो।'' बालक चुपचाप उनके मुख की ओर ताकता, पर बोलता कुछ भी नहीं।

दूसरे दिन प्रात:काल होते ही ब्राह्मण दंपती अपने पुत्र को लेकर पुन: शंकराचार्य के पास पहुँचे और ब्राह्मणी उनके चरणों में गिरकर रोते हुए प्रार्थना करने लगी—''हे देव! मेरा यह एकमात्र पुत्र है। यह विरक्त हो जाएगा, तब मैं किसका मुख देखकर अपना जीवन व्यतीत करूँगी।'' आचार्य बोले—''माता! आप अपने इस पुत्र के लिए वृथा चिंता न करें। दरअसल इस बालक के शरीर में एक सिद्ध योगी निवास करते हैं। इसी कारण यह गृहस्थ धर्म का पालन नहीं कर सकेगा।''

शंकराचार्य मुस्कराते हुए बोले—''यह बालक तो अपने वास्तविक आत्मस्वरूप में स्थित है और ब्रह्मज्ञानी है, इसे कोई माया, मोह, आसक्ति आदि नहीं बाँध सकते। ब्रह्मज्ञानी होने के कारण एवं अपने आत्मस्वरूप में स्थित होने के कारण इसका व्यवहार साधारण मनुष्यों से सर्वथा भिन्न है। मुझे इसके पूर्वजन्म के बारे में भी ज्ञात है। शायद आपको वह घटना याद नहीं रही, जब यह मात्र दो वर्ष का था।'' ''आप कृपा करके वह घटना हमें बता दीजिए देव।''—ब्राह्मण ने नम्रता से आचार्य शंकर से कहा।

आचार्य बोले—''स्मरण कीजिए, जब यह बालक दो वर्ष का था तब आप पति-पत्नी उसे लेकर यमुना स्नान को गए थे। उसे नदी के किनारे बिठाकर आप दोनों नदी में स्नान करने लगे। वहीं यमुना किनारे एक योगी ध्यानस्थ बैठे थे। आपने समझा कि वे योगी बैठे हुए हैं, और आप अपने

बालक को उनके समीप छोड़कर स्नान करने चले गए। यह दो वर्ष का बालक खेलते-खेलते यमुना में डूबकर मर गया। आप दोनों स्नान कर जब वापस आए तो मृतक पुत्र को देखकर उसे उस ध्यानस्थ योगी के चरणों में डालकर विलाप करने लगे। आप दोनों के रुदन को देखकर उन योगी को दया आ गई और वे अपने योगबल से अपने शरीर का त्याग कर इस मृत बालक के शरीर में योगबल से प्रवेश कर गए। बालक को जीवित देखकर आप दोनों बहुत आनंदित हुए और उसे अपने घर ले आए। वे सिद्धयोगी ही इस बालक के शरीर में निवास कर रहे हैं। आप इसे गृहस्थ नहीं बना सकेंगे।''

यह सुनकर दंपती बोले—''हाँ देव! वह घटना हमें स्मरण हो आई है।'' तभी वह बालक बोला—''माता! अब तो आपको मेरा परिचय ज्ञात हो चुका है। अब आप यह जान चुकी हैं कि 'मैं कौन हूँ' इसलिए हे माता! आप हमें गृहस्थी में रहने के लिए विवश न करें। अब मुझे आप पूज्य आचार्यश्री के चरणों में रहने की आज्ञा प्रदान कीजिए। मैं भगवान से प्रार्थना करता हूँ, जिससे आपको शीघ्र ही पुत्र की प्राप्ति होगी और वह गृहस्थ धर्म का पालन कर आपको आनंद प्रदान करेगा।''

ब्राह्मण दंपती ने अपने सिद्धयोगी पुत्र के मुख से सांत्वना भरे शब्द सुनकर हृदय को शांत कर फिर से आचार्य शंकर के चरण छुए और अपने आँसू पोंछते हुए अपने उस योगी बालक को आचार्य शंकर के पास छोड़कर अपने घर चले गए। वह सिद्धयोगी बालक आचार्य शंकर के चरणों में लिपट गया। शंकराचार्य ने बड़े प्यार से उसके सिर पर हाथ फेरा और उसे एक नया नाम दिया—'हस्तामलक।'

आचार्य शंकर ने शास्त्रानुसार उसे संन्यास-मंत्र में दीक्षित किया। आचार्य शंकर के सान्निध्य में तप, ध्यान करते हुए बड़े अल्प समय में ही वह बालक ब्रह्मज्ञान में निष्णात हो निज बोध को प्राप्त हो गया। ब्रह्मज्ञान की ज्योति से उसका मुखमंडल प्रदीप्त हो उठा।

उसे यह निज बोध हुआ कि श्रीगुरुदेव आचार्य शंकर की कृपा से आज मैं धन्य हूँ, कृतकृत्य हूँ, संसार बंधन से रहित हूँ तथा नित्यानंदस्वरूप और सर्वत्र परिपूर्ण हूँ। मैं असंग हूँ, अशरीर हूँ, अलिंग हूँ और अक्षय हूँ। मैं अकर्त्ता हूँ, अभोक्ता हूँ, अविकारी हूँ, अक्रिय हूँ और मैं शुद्ध बोधस्वरूप हूँ।

मैं न यह हूँ, न वह हूँ, बल्कि मैं ब्रह्म ही हूँ। मैं तो अपने नित्यानंदस्वरूप आत्मा में स्थित होकर अपनी पहली अवस्था से सर्वथा विलक्षण हो गया हूँ। मैं न करने वाला हूँ, न कराने वाला हूँ, न भोगने वाला हूँ, न भुगतने वाला हूँ, न देखने वाला हूँ, न दिखाने वाला हूँ। मैं तो सबसे विलक्षण स्वयंप्रकाश आत्मा हूँ। मैं सत-चित्-आनंद रूप हूँ। हे गुरुदेव! आपकी कृपा से ही मुझे यह बोधोपलब्धि हुई है। ऐसा जानकर वह आचार्यश्री के चरणों में लिपट गया।

वह बालक अब हस्तामलकाचार्य कहलाने लगा। वह शंकराचार्य के प्रिय शिष्यों में गिना जाने लगा। शंकराचार्य के द्वारा रचित ग्रंथों का भाष्य हस्तामलकाचार्य ने भी किया था। हस्तामलकाचार्य भी आचार्य शंकर के प्रिय शिष्य पद्मपाद की ही तरह अपने गुरुदेव की सेवा व कार्य में निरत रहने लगे थे। ❑

दीक्षा देने का अधिकार मात्र महाप्राणों को है। जिसके पास कुछ वैभव है, वही दूसरे को दान दे सकेगा। जो स्वयं ही खाली हाथ है और याचना पर निर्वाह करता है, उससे कोई अनुदान मिलने की आशा व्यर्थ है।

—परमपूज्य गुरुदेव

भारतीय संस्कृति का जीवन संदेश

यदि मानव जीवन से एक कामना का तत्त्व हटा दिया जाए, उसे किसी प्रकार महत्त्व न दिया जाए तो जीवन के कई क्षेत्रों में संकट खड़े हो जाएँगे। लोग व्यवसाय-भत्ता छोड़ देंगे, अस्पताल बंद हो जाएँगे, शिक्षक कहेंगे हमें तो पढ़ाने की कामना ही नहीं, परिवार विघटित हो जाएँगे। ऐसे में यह सोचना अनिवार्य है कि जिस कामना को शास्त्र वर्जित कर रहे हैं वह क्या है?

निश्चित ही किसी ऊँची कामना की बात हो रही है। ऊँची कामना माने वह जो आपका कर्त्तव्य है, जिसे करने को आपको भेजा गया है। वह जो जीवनमूल्यों से संबंधित है, जिसका आपके जीवन में अधिकाधिक महत्त्व है।

कामना ऐसी हो, जो अहंकार को ध्वस्त कर दे, जीवन में नव-प्राण भर दे, चेहरे पे रौनक पैदा कर दे, चित्त को शांत कर दे। ऐसी कामना एकमात्र परमात्मप्राप्ति की ही हो सकती है, फिर भी इसके साथ कर्त्तव्य जुड़ा हुआ है। बिना कर्त्तव्य के कोई कामना सार्थक नहीं, यदि उसे अपने उच्च ध्येय को प्राप्त करना है तो कर्त्तव्य का बोध अंगीकार करना पड़ेगा। यही साधना है।

अब इस कामना को विश्वमंगल के लिए समर्पित होने से कोई रोक नहीं सकता; क्योंकि यह कामना अपने से नहीं, अपने कर्त्तव्य से जुड़ी हुई है और अपना कर्त्तव्य हमें परमात्मा से जोड़ता है। जिस विषय में रुचि जगे, उसी को प्राप्त करने की उत्कंठा को कामना कहते हैं, क्यों न इसका स्वरूप अधिक परिष्कृत हो, चित्त को शांत कर देने वाली कामना, मन को मर्यादित चिंतन-प्रवाह में छोड़ने वाली कामना, हृदय की दुर्बलता को मिटाने वाली कामना, सारी कमियों को दूर करने वाली कामना। उसे ही कहते हैं निष्कामना, कृष्ण गीता में इसी की चर्चा करते हैं, योगियों को भी यही प्रिय है।

अब बात आती है कि यदि ऐसी सच्ची कामना ही वरेण्य है तो क्यों न सब त्याग दिया जाए, संन्यासी बना जाए; परंतु जिस कामना की बात भगवान कृष्ण करते हैं उसमें कठोर कर्म भी शामिल है, निस्तेज नहीं निश्चल होना है, हृदय से परिपक्व, सभी प्रकार के मनोभावों पर नियंत्रण तथा एक महान जीवन की अभिलाषा।

इसी के लिए गीता अवतरित हुई है, उसने मानवमात्र को यही संदेश दिया कि कर्म तो करो, पर अंतिम ध्येय को ध्यान में रखकर; पीड़ा तो सहो, पर कर्त्तव्य की पुकार पर; जो उपयुक्त है, उसे अपनाओ और अपने जीवन को धन्य बनाओ। संघर्षों से न घबराओ और आत्मा की अजर-अमर सत्ता को बातों से नहीं, वरन क्रिया-कृत्यों से मुखरित कर बैठो।

यही गीता है, यही निष्काम कर्मयोग तथा यही भारतीय संस्कृति का जीवन-संदेश कि हर वह कृत्य अपनाओ, जिससे जीवन सार्थक बनता हो, जीवन में प्रज्वलित ओज, तेज एवं बल का संचार हो, जीवन महान बने। ऐसी गीता को लोगों ने क्या कर दिया? उसका विकृत अर्थ कर उसे निष्कामना के बदले कर्म-संबंध का विच्छेद कर

देने तथा संन्यास के नाम पर सभी चीजों को छोड़ देने का स्वर प्रदान कर दिया।

गीता वही है, पर हमारी दृष्टि बदली नहीं और आज हम कहते-कहते थक गए कि कर्म करो और फल की चिंता मत करो, पर वह कर्म और फल है क्या? इसका किसी को पता नहीं। यही अनहोनी भारतीय जनमानस के साथ हुई है, जिसका निराकरण करना आवश्यक है, जिसे सुधारा नहीं गया तो गीता तो पास में रखी रहेगी, परंतु उसका विकृत अर्थ करने में हमें देर नहीं लगेगी।

गीता एक महान ग्रंथ है, उसे अपनी आदर्श मनोभूमि के निर्माण में सहायक समझना चाहिए, उसकी शक्ति से अपने जीवन को सँवारना चाहिए, दूसरों के नहीं अपने कर्त्तव्य का स्मरण रखना चाहिए। यही वह गीता है, जिसे महर्षि अरविंद ने जेल के तहखाने में कुछ इस प्रकार पढ़ा था कि शेष जीवन अध्यात्म को समर्पित हो गया।

महात्मा गांधी ने इसे ही पकड़कर इतनी बड़ी लड़ाई लड़ी, भारतीय स्वतंत्रता का हरेक अध्याय गीता की आत्मा से ओत-प्रोत है, भगवान राम का जीवन संदेश भी गीतामय ही है। तुलसीकृत रामचरितमानस में उन्हें अथक कर्मयोगी की परिभाषा दी गई है।

भगवान ने जितने अवतार लिए, सभी एक स्वर में अपनी क्षुद्र कामनाओं के अर्पण तथा महान कामनाओं के शिलान्यास की बात करते हैं। यही अध्यात्म का विषय भी है। इस दृष्टि से सोचा जाए तो प्रत्येक कार्य उस दैवी भावना से होना चाहिए जिसमें राग-द्वेष, हानि-लाभ तथा मान-अपमान का भाव न हो, दूसरे की देखा-देखी नहीं, बल्कि अपने स्वधर्म का बोध हो, जीवन को नित नया बनाने का संकल्प हो तथा महानता का अभिनव राग हो। इसके लिए क्या करना होगा?

सर्वप्रथम तो लौकिक बंधनों से मुक्त होइए, जीवन को सरस एवं गुण-प्रतिभा से संपन्न बनाइए, देखिए कि किस मार्ग से चलकर आवश्यक सफलता प्राप्त की जा सकती है, फिर जुट पड़िए अपने कर्त्तव्य में। यही नीति-धर्म है, इसके परिपालन से मनुष्य की प्रज्ञा जगती है, उसका विवेक प्रकाशित होता है तथा उसका जीवन अपने अनुकूल पथ की तरफ बढ़ चलता है।

गीता-धर्म के सच्चे उपासकों को जीवन में यह संकल्प ग्रहण करना चाहिए कि वे जिस कार्य को पकड़ेंगे उसे पूर्ण पुरुषार्थ एवं मनोयोग से, सच्ची सफलता तक पहुँचा के रहेंगे। अपना कर्त्तव्य अपनी आत्मा के गहन मंथन के उपरांत ही उभरकर आता है, इसलिए निश्चिंत होइए और अपने कर्त्तव्य की पुकार पर आगे बढ़ चलिए। यही निष्कामता है तथा एक सच्चे-सुफल जीवन का आधार है। ❑

एक बाग में दो वृक्ष थे। एक बिलकुल सूख गया था, दूसरा हरा-भरा था। सूखे वृक्ष पर गिद्ध निवास करता था, जबकि हरे वृक्ष पर कोयल रहती थी। दोनों में प्रायः विवाद हो जाया करता था। गिद्ध कहता था कि संसार मिथ्या है, कोयल कहती थी कि संसार सत्य है।

एक दिन तोते ने उनके विवाद को सुना तो बोला—''व्यर्थ झगड़ा न करो। संसार परिवर्तनशील है। जो संसार की आसक्ति से परे चले जाते हैं, उनके लिए यह जगत् मिथ्या है, पर शेष के लिए यह सत्य है। इस सत्य के अनुरूप जो स्वयं को ढाल लेता है, वही इस संसार का सही अर्थ जान पाता है।''

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष◀

अपना काम स्वयं करें

एक रेलवे स्टेशन पर एक गाड़ी रुकी और उस गाड़ी से कई लोग स्टेशन पर उतरे और अपने सामान के साथ स्टेशन से बाहर निकलने लगे। उस गाड़ी से एक नौजवान लड़का भी उतरा। लड़के के पास एक बैग था। वह बैग ढोने को किसी कुली को इधर-उधर देखने लगा, पर चूँकि वह स्टेशन छोटा था, इसलिए वहाँ कुली नहीं थे।

किसी कुली को नहीं देख वह नौजवान बहुत परेशान हुआ। ऐसा भी नहीं था कि उसका बैग बहुत भारी हो और वह उसे स्वयं स्टेशन के बाहर नहीं ले जा सकता हो, पर अपना काम स्वयं न करने की आदत के कारण वह एक छोटे-से बैग को भी स्वयं ढोने में परेशानी व शर्मिंदगी महसूस कर रहा था।

उस लड़के की परेशानी को वहाँ पास में ही खड़े एक अधेड़ उम्र के धोती-कुरता पहने व्यक्ति देख रहे थे। वे उस नौजवान के सामने से गुजरने लगे। उस नौजवान ने साधारण से दिखने वाले उस व्यक्ति को कुली समझ लिया और उन्हें सामान उठाने के लिए कहा। धोती-कुरता पहने उन सज्जन व्यक्ति ने भी चुपचाप उसका सामान उठाया और उसके पीछे चल पड़े। उसके घर तक सामान पहुँचाने के बाद वे सज्जन वापस लौटने लगे।

उस नौजवान ने उनको देने के लिए पैसे निकाले, पर उन्होंने पैसे लेने से साफ मना कर दिया और उस युवक से कहा—"धन्यवाद! पैसे की मुझे जरूरत नहीं है। फिर भी यदि तुम मुझे कुछ देना चाहते हो तो तुम मुझे यह वचन दो कि आगे से तुम अपना काम स्वयं करोगे। अपना काम स्वयं करने से ही तुम स्वावलंबी बनोगे। जिस देश का नौजवान स्वावलंबी नहीं, वह देश कभी सुखी और समृद्धशाली नहीं हो सकता। स्वयं वह व्यक्ति भी कभी सुखी और समृद्धशाली नहीं हो सकता।"

धोती-कुरता पहने वे सज्जन व्यक्ति कोई और नहीं, बल्कि उस समय के महान समाजसेवक, समाजसुधारक और प्रसिद्ध विद्वान ईश्वरचंद्र विद्यासागर थे। वह नौजवान उनका परिचय जानकर स्वयं पर बहुत लज्जित हुआ और उस दिन से उसने अपना काम स्वयं करने का संकल्प लिया।

अपना काम स्वयं करना एक बहुत ही अच्छी आदत है। ऐसी आदत के लोग कभी भी अपने काम के लिए दूसरों पर आश्रित नहीं होते। नौकर-चाकर होते हुए भी ऐसे लोग अपना काम स्वयं करने में ही अपना बड़प्पन समझते हैं। लाल बहादुर शास्त्री प्रधानमंत्री होते हुए भी अपने कक्ष में स्वयं झाड़ू लगाया करते थे। डॉ० ए०पी०जे० अब्दुल कलाम राष्ट्रपति जैसे सर्वोच्च पद पर होते हुए भी अपने वस्त्र स्वयं धोते थे।

भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ० राजेंद्र प्रसाद भी अपने काम स्वयं ही किया करते थे। गांधी जी अपने साबरमती आश्रम में अपने सारे काम स्वयं करते थे और इसलिए उस आश्रम में रहने वाले कार्यकर्त्ता भी उनके आचरण से सीख ले छोटे-बड़े सभी काम करते थे। शौचालय साफ करना, भोजन बनाना, बरतन साफ करना, कपड़े धोना, आश्रम की साफ-सफाई करना आदि सभी काम आश्रम के लोग स्वयं करते थे और इसमें अपनी शान समझते थे।

अपना काम स्वयं करने से व्यक्ति हमेशा चेतन, सक्रिय और ऊर्जावान बना रहता है। शारीरिक और मानसिक श्रम करने से शरीर और मन, दोनों स्वस्थ रहते हैं और व्यक्ति में आलस्य-प्रमाद जैसे दोष भी नहीं पनपते।

अपना काम स्वयं करने से स्वास्थ्य लाभ के अलावा अपने हर काम को सही तरीके से और समय पर पूरा कर पाने का लाभ भी मिलता है। हमारे व्यक्तित्व में निखार आता है। दूसरों के भरोसे रहने से काम के पूर्णरूपेण होने और समय पर संपन्न होने में संदेह भी होता है जिससे हमें अनावश्यक तनाव और चिंता होती है और फलस्वरूप हम शारीरिक-मानसिक रूप से अस्वस्थ भी रहते हैं।

अपना काम स्वयं करने से हम हर कदम पर अपने काम का मूल्यांकन भी करते हैं, गलत को सही करते हैं और अच्छे परिणाम पाते हैं। अपना काम स्वयं करने, समय पर करने और पूर्णरूपेण करने से हमें हमारे काम में सफलता मिलती है। हमें आत्मसम्मान और आत्मसंतोष प्राप्त होता है। हर छोटे-छोटे काम के लिए दूसरों पर आश्रित रहने और दूसरों की सेवा-सहायता पाने की ताक में रहने से न सिर्फ हमारा काम खराब होता है, बल्कि हमें आत्मग्लानि भी होती है।

ऐसी सोच हमें परावलंबी, पराश्रित, परजीवी, पंगु बनाकर हमें अपने आत्मस्वाभिमान और आत्मगौरव से भी वंचित करती है। हाँ! यदि हम अशक्त हैं, बीमार हैं, मजबूर हैं, संकट में हैं तो किसी की सेवा-सहायता लेने में कोई हर्ज नहीं। हमें ऐसी स्थिति में सेवा-सहायता लेनी भी चाहिए और देनी भी। इसमें कुछ भी बुरा नहीं, पर दूसरों के भरोसे रहने की आदत कोई भली आदत बिलकुल भी नहीं है।

हम यदि स्वस्थ हैं तो हमें अपना काम स्वयं करने की आदत डालनी चाहिए और इसकी शुरुआत अपने घर से करनी चाहिए। जैसे अपने वस्त्रों की धुलाई करना, खाना खाने के बाद अपने बरतन स्वयं धोना, अपने कमरे को स्वयं साफ करना, अपने हर सामान को व्यवस्थित और यथास्थान रखना, गोसेवा करना, शौचालय का उपयोग कर उसे साफ रखना, बागवानी में पौधों को सींचना, आस-पास की सफाई करना आदि आदतें हमारे व्यक्तित्व में चार चाँद लगाती हैं।

यदि इन कामों के लिए भी हम घर के अन्य सदस्यों पर निर्भर होते हैं तो उनके लिए भी हम बोझ बनते हैं। भले ही घर के सदस्य बोलें नहीं, पर वे हमारी ऐसी आदतों से प्रसन्न तो नहीं हो सकते और आकस्मिक रूप से कोई इन कामों में सहयोग कर दे तो कोई बात नहीं, पर कोई भी किसी का काम बार-बार करने से प्रसन्नता का अनुभव तो नहीं कर सकता और ऐसा दूसरों से बार-बार कराना भी क्या कोई शोभनीय बात है? बिलकुल नहीं।

अपने हर छोटे-छोटे काम के लिए दूसरों को कहना, यह बिलकुल भी अच्छी आदत नहीं। स्वावलंबी, आत्मनिर्भर व्यक्ति ही स्वयं के साथ-साथ परिवार, समाज व राष्ट्र के काम आता है और स्वयं को गौरवान्वित करने के साथ-साथ परिवार, समाज व राष्ट्र को भी गौरवान्वित करता है।

वह किसान हो, श्रमिक हो, खिलाड़ी हो, अध्यापक हो, वैज्ञानिक हो, राजनेता हो, अभिनेता हो—वह जिस किसी-किसी भी पेशे में हो, वह छोटे-से-छोटे और बड़े-से-बड़े हर काम पर अपनी पैनी नजर रखता है, हमेशा सतर्क, सावधान और जागरूक रहता है और स्वयं के साथ-साथ औरों के भी काम आता है। अपना काम स्वयं करने की

आदत ही हमें महान बनाती है। अपना काम स्वयं करने से हमारा आत्मविश्वास बढ़ता है।

आजकल ऐसा देखा जाता है कि अपना काम स्वयं न करके दूसरों से कराने को ही सम्मान व गर्व की बात मानी और समझी जाने लगी है। इसी विकृत सोच ने व्यक्ति को आलसी, प्रमादी, पंगु, निकम्मा और निष्क्रिय बना दिया है। इससे व्यक्ति के साथ-साथ परिवार, समाज, राष्ट्र का भी नुकसान होता है। परमात्मा ने हमें काम करने के लिए हाथ, पैर, बुद्धि प्रदान किए हैं। परमात्मा ने हमें अपना सर्वश्रेष्ठ राजकुमार बनाकर धरती पर भेजा है। हमें मनुष्य शरीर दिया है। हमें सभी प्राणियों से श्रेष्ठ और बुद्धिमान बनाया है और परमात्मा ने ये सारे अनुदान-अनुग्रह हमें परावलंबी, पराश्रित, परजीवी और पंगु बनने के लिए तो नहीं दिए हैं। हमें सर्वसमर्थ बनाया है, ताकि हम हर कर्म को कुशलतापूर्वक संपन्न कर हर क्षेत्रों में सफलता पाएँ और स्वयं के साथ-साथ दूसरों को सुखी बना सकें।

परमात्मा ने बीज रूप में हममें असीम शक्ति प्रदान की है, जिसका विकास तभी हो पाता है, जब हम स्वयं क्रियाशील होते हैं, श्रमशील होते हैं। अपना काम स्वयं करने से हमारा आत्मविश्वास बढ़ता है, हमारी सोई हुई शक्ति जागती है, जिससे हम भौतिक और आध्यात्मिक, दोनों ही क्षेत्रों में सफल होते हैं। बड़े-बड़े महापुरुष, ऋषि-मुनि इसी कारण अपने शिष्यों को हर काम स्वयं करने की सीख देते थे।

अखिल विश्व गायत्री परिवार के संस्थापक, गायत्री महाविद्या के मर्मज्ञ और इस युग के महानतम ऋषि परमपूज्य गुरुदेव अपना काम स्वयं करके अपने शिष्यों को ऐसा करने की सीख देते थे। हजारों शिष्यों के होते हुए भी वे पानी पीने की आवश्यकता महसूस करने पर स्वयं उठकर पानी लेकर पीते थे, स्वयं खड़े होकर पंखे का स्विच ऑन और ऑफ करते थे। किसी कार्यक्रम के लिए स्टेशन पर उतरते ही वहाँ कार्यकर्त्ताओं के होते हुए भी अपना सामान स्वयं लेकर चल पड़ते थे। अपने वस्त्रों की धुलाई स्वयं करते थे। अपने कमरे स्वयं साफ करते थे। अपने छोटे-से-छोटे हर काम को वे स्वयं ही करते थे।

गुरुदेव के निर्देशानुसार ही शांतिकुंज आश्रम में आध्यात्मिक साधना के लिए आए हुए शिविरार्थियों को भी ये सारी चीजें सिखाई जाती हैं, कराई जाती हैं, ताकि वे आत्मनिर्भर हो सकें और भौतिक और आध्यात्मिक दोनों ही दृष्टि से लाभान्वित हो सकें।

वे अपना काम स्वयं कर सकें, जिससे उनका भौतिक और आध्यात्मिक उत्थान हो सके। वे हमेशा स्वस्थ्य और सक्रिय रहकर जीवन में सदैव प्रसन्न और प्रफुल्लित रह सकें। इसी कारण शांतिकुंज आश्रम में श्रमदान करने की परंपरा चली आ रही है।

जो अपने छोटे-छोटे काम भी स्वयं न कर सकें, उनसे किसी बड़े या महानतम काम किए जाने की उम्मीद कैसे की जा सकती है? वास्तव में अपने काम को स्वयं करना लज्जा की बात नहीं, बल्कि अपने काम को दूसरों से कराने में गर्व महसूस करना ही घोर लज्जा की बात है। हमारे आदर्श वे नहीं, जो अपना काम करने में भी शर्मिंदगी महसूस करते हैं, बल्कि हमारे आदर्श वे लोग हैं, जो सर्वोच्च पदों पर आसीन होते हुए भी अपना काम स्वयं करने में गर्व महसूस करते हैं।

समाज में ऐसे अगणित लोग हैं, जो बड़े पदों पर आसीन हैं और भोजन बनाना, बरतन साफ करना, कमरे साफ करना, बागवानी का काम करना,

आस-पास की सफाई करना, सामूहिक श्रमदान में भाग लेना, स्वच्छता अभियान में भाग लेना, नौकरी से अवकाश प्राप्त कर घर आने पर कृषिकार्य में भाग लेना, गाड़ी होते हुए भी कभी पैदल ही चल पड़ना आदि काम बड़े गर्व से किया करते हैं।

ऐसे लोग ही हमारे आदर्श होने के योग्य हैं और ऐसे लोग ही स्वयं के साथ व्यक्ति, परिवार, समाज और राष्ट्र का भला कर पाते हैं। इसलिए अपना काम स्वयं करने पर लोग क्या कहेंगे—यह सोचने के बजाय हम जो करने योग्य हैं, उसे अवश्य करें और लोग मेरे विषय में क्या सोचते हैं, इसकी परवाह बिलकुल भी न करें।

जैसा कि परमपूज्य गुरुदेव श्रीराम शर्मा आचार्य जी ने कहा है—"लोग क्या कहेंगे यह मत सोचो, बल्कि यह देखो कि जो करने योग्य था, वह बन पड़ा या नहीं।" वास्तव में गुरुदेव की यह उक्ति महामंत्र है, जो हमें अपना काम स्वयं करने एवं हर अच्छे काम को करने में गौरवान्वित महसूस करने की प्रेरणा देती है और यही सुखी व सफल जीवन का मंत्र भी है।

जिन्हें जीवन में सुखी, सफल, समृद्ध व सानंद होना है, उन्हें अपना काम स्वयं करने की आदत अविलंब, आज और अभी से ही आरंभ कर लेनी चाहिए। ❑

एक धनी व्यक्ति सुकरात से मिलने पहुँचा। वहाँ उनसे बातें करते-करते वह अपनी तारीफों के पुल बाँधने लगा। जब उसकी डींगें काफी बढ़ गईं तो सुकरात ने पृथ्वी का एक नक्शा मँगवाया और उससे पूछा—"मित्र! यह बताओ कि इस नक्शे में तुम्हारा घर कहाँ है?"

घर तो उस नक्शे में उसे कहाँ मिलता, पर बहुत प्रयत्न करने के बाद चने के दाने के बराबर का उसका देश उसे उस नक्शे में दिखाई पड़ा।

सुकरात वह दिखाते हुए उससे बोले—"मित्र! परमात्मा ने अनंत विस्तार के ब्रह्मांड की रचना की है। उस ब्रह्मांड में अनेकों ग्रह हैं और उन्हीं में से एक ग्रह पृथ्वी भी है। इस पृथ्वी पर भी अनेकों देश हैं और उनमें से एक तुम्हारा देश भी है। तुम्हारे देश में भी अनेकों राज्य हैं और उनमें से एक राज्य तुम्हारा है। तुम्हारे राज्य में भी अनेकों नगर हैं और उनमें से एक नगर तुम्हारा है। तुम्हारे नगर में भी अनेकों धनपति होंगे और उनमें से एक तुम हो। जब परमात्मा के इतने बड़े साम्राज्य में मनुष्य का स्थान इतना छोटा-सा है तो उसके लिए इतना व्यर्थ अहंकार करने से क्या लाभ?"

थोड़ा रुककर सुकरात आगे बोले—"सांसारिक उपलब्धियों पर गर्व करने से बेहतर है कि तुम उस सौभाग्य को विकसित करने का प्रयत्न करो, जिससे तुम्हारा जीवन सार्थक बन सके।"

धर्म एवं मत

इस धरती पर जितने प्रकार के मनुष्य हैं, उतने ही प्रकार के उनके मंतव्य एवं जीवन जीने के तौर-तरीके हैं। उन्होंने किसे अपनाया, किसे नहीं, यह उनका व्यक्तिगत एकाधिकार है। देश, काल, परिस्थिति अनुसार मनुष्य अपनी श्रद्धा का केंद्र, अपने आकर्षण का बिंदु ढूँढ़ता है।

उसे वही वस्तु प्रिय होती है, जो उसे आत्मिक संतोष एवं मानवीय गुण-मूल्यों से सुसज्जित करे। धर्म का यहाँ स्थान नहीं, यह तो व्यक्तिगत स्वतंत्रता का विषय है, मत का परिवर्तन देश-काल की परिस्थिति अनुसार होना निश्चित है। फिर धर्म क्या है, क्या धर्म कोई बाह्य वस्तु है?

धर्म का संबंध आदर्शों एवं सिद्धांतों से है, या वह कोई कपोल-कल्पना, निष्ठुर वाक्यावली भर है। धर्म किस सिद्धांत की बात करता है, वह आपके व्यक्तिगत एकाधिकार के विरुद्ध नहीं है, वह कोई उपचार-पद्धति भी नहीं। वह तो अंतर्जगत् की एक महान घटना है, एक विशिष्ट गतिविधि है, समय एवं काल की बह रही विभिन्न धाराओं में, अंतः की विस्मृति न होने देने का सुस्वप्न है, धर्म मानवता का प्रिय विषय है, परंतु उसकी समझ उतनी ही दुर्लभ।

भाषा के अंतर से, क्षेत्रीय विभिन्नताओं में, प्रकट एवं अप्रकट रूप से, धर्म की दिशाधारा पर कोई निश्चित प्रभाव नहीं पड़ता है, धर्म वैसा ही रहता है, जैसा पहले था, मात्र हमारी श्रद्धा के कोण, हमारे विश्वासों के परिदृश्य, हमारी आत्मिक सत्य के प्रति रुचि में भिन्नता आती रहती है।

यही मत के निर्माण एवं धर्म के कल्पित अर्थों का भी आरंभिक चरण है। धर्म है एक केंद्रीय वस्तु, मत है अपना व्यक्तिगत आचरण। धर्म आवश्यक नहीं मतानुकूल हो और मत की परिधि अक्सर बहुत संकुचित होती है। धर्म को जिन्होंने समझा है, वे धार्मिक प्रवृत्ति को पहचान के, उसे समझकर उसके अनुकरण में देरी नहीं करते।

जिनका धर्म विलोप हो गया। जिनमें धर्म का विलोप हो गया और जो धर्म की वास्तविक परिभाषा से अनभिज्ञ हैं, उन्हें यही कहा जा सकता है कि पहले धर्म विषयक चर्चा को बंद कर, अपने मत का अनुसंधान किया जाए तथा जिस भी रूप में धर्म प्रदर्शित होता हो, उसे ही स्वीकार आत्मा की परिशुद्धि की दिशा में बढ़ा जाए।

धर्म है आत्मा का साधन, मनुष्य ने उसे अपनी कीमती कोई तिजोरी समझ लिया है, धर्म उभरता है अनुसंधान से, मनुष्य उसे बस मान लेना चाहता है।

धर्म एक विज्ञान है, जिसे समझने के लिए चाहिए एक तटस्थ मन, एक गंभीर चिंतन, अनुकरण नहीं अनुभूति और जो सत्य है, उसे स्वीकार करने की दृढ़ ललक।

धर्म है वास्तविक पूँजी, मानवता के ज्ञान ग्रहण का सर्वोच्च बिंदु। धर्म है अनासक्ति और उसके ऊपर प्रकृति की गतिविधियों को देख सकने की प्रबल दृष्टि, एक विकारशून्य अवस्था, एक परिष्कृत चिंतन।

ऐसा धर्म जिस दिन मानवता के चरित्र-चिंतन का आधार बनेगा, मानवता खिल उठेगी, उसे विचार-बुद्धि से निष्कपट चिंतन का आसरा मिलेगा, वह दिव्य कमल की भाँति अपना वास्तविक रूप पहचानेगी, तभी धर्म की पताका, उसका केंद्रीय

एकाधिकार, धर्म की वास्तविक-पूँजी उद्भूत हो उठेगी, एवं मनुष्य चिंतन एवं चरित्र से श्रेष्ठ बन, सच्चा धर्माधिकारी बनेगा।

विश्व के धर्मों ने इसलिए सफलता नहीं पाई; क्योंकि वे सब मत-वर्ग में बिखर गए और वहाँ धर्म का लोप हो पड़ा, धर्म मत की धुरी पर गिना जाने लगा, धर्म आत्मा का प्रतिनिधि नहीं, मनुष्य की आकांक्षा एवं क्रिया-प्रतिक्रिया से संबंधी बन पड़ा।

हमें धर्म को मत से इतर देखने की वो दृष्टि विकसित करनी चाहिए, जो वास्तविकता का सुदर्शन कराए। जिसे जानकर मनुष्य देवता कहलाए। जो प्रकृतिप्रदत्त क्षमताओं एवं अनुसूचियों से आगे आत्मदर्शन एवं आत्मवैभव की घटना का द्योतक बने, वही धर्म वास्तविक है तथा इसके द्वारा सचमुच मनुष्य के भीतर क्रांति लाई जा सकती है।

धर्म ने अनेकों जीवनों का उद्धार किया है, धार्मिक क्रिया-कृत्यों से मानव अपने महामानवीय स्वरूप को प्राप्त हो पाया है, धरती पर स्वर्ग सदृश परिस्थितियाँ विनिर्मित हुई हैं, श्रद्धा ने जीवन का कायाकल्प किया है। धर्म वास्तविकता है, अंधानुकरण नहीं, प्रेम है, कल्पित स्वार्थ नहीं। इसलिए अपने मत की बात धर्म की परिभाषा के रूप में न की जाए। धर्म सदाबहार है, अंतर्हृदय की वस्तु है।

इस अर्थ में हमारे मत कहीं-न-कहीं धर्म के समर्थक हो सकते हैं, धर्म उनसे प्रेरित नहीं, मत के अनुसार चलना बुरा नहीं, परंतु यदि मत धर्म के मार्ग पर बाधा बने, मत का प्रचार अधिक हो, धर्म पीछे ही रह जाए, मनुष्य की आत्मा कुंठित ही बनी रहे और धर्म विजातीय तत्त्वों से भरा मत की प्रतिष्ठापना में जा लगे।

तब इतना ही समझना चाहिए, मनुष्य की आत्मा ने एक महान संभावना की इतिश्री कर दी है, अब धर्म अपनी शक्ति-वैभव के अनुसार क्रियान्वित नहीं हो पाएगा।

जिसे भगवान कहते हैं वह आप-हमारे मन की पकड़ में नहीं, उसे श्रद्धा से ग्रहण किया जाता है। धर्म यदि आंतरिक अनुशीलन एवं वृहद् दृष्टि पर कार्यान्वित हो, उसका सच्चा स्वरूप मानवीय-पुरुषार्थ एवं आत्मोत्कर्ष की दिव्य भावना के अनुकूल हो, तभी धर्म अपनी वास्तविक परिभाषा के अनुसार, अपने केंद्रीय-क्रियाकलाप की समझ प्राप्त कर, एक नए ही रूप में दिखाई पड़ेगा।

शिष्टता धर्म की कसौटी हो सकती है, परंतु धर्म क्या नैतिक-नियमों के अंतर्गत रहने वाली वस्तु है। धर्म सर्वात्मा की दिव्य पुकार है या वह एक अनूठी वस्तु।

धर्म सदाशीलता है या वह कोई क्षणिक व्यवहार की वस्तु। धर्म के द्वारा मनुष्य महान कल्याण को प्राप्त हुआ है, आंतरिक समस्या को उसने सुलझाया है तथा बाह्य रूप से मनुष्य समुदाय को उसने लाभान्वित किया है, धर्म एक ऐसी विलक्षण शक्ति है, जिसे विचारवानों ने अमृत तक की संज्ञा दी है।

इस धर्म को जिस दिन मनुष्य सही रूप में पहचान लेगा, धार्मिक विषय-वस्तु उसकी जिह्वा पर ही नहीं, उसके आचरण एवं कल्याण-व्यवहार की अभ्यंगी तथा उसे उत्कर्ष प्रदान करने वाली होगी और तभी मनुष्य नवीन रूप में, अपने भावी-कल्याण की दिशा में बढ़ चलेगा। यही महानता का राजमार्ग है तथा मनुष्य के वास्तविक विकास का द्योतक भी।

धर्म की इसी उज्ज्वल संभावना के लिए मत की रचना हुई है, मत अपने आप में स्वतंत्र न हो, उसकी विषय-वस्तु धर्म को केंद्र में रख, कल्याण की दिशाधारा में हो, यही अंततः धर्म की स्वीकारोक्ति होगी तथा एक नई मनुष्यता के निर्माण का आधार भी। ❑

पात्रता का विकास

हम जैसा सोचते हैं, वैसा करें तथा यथार्थ में जीवन को स्वर्गीय बनाएँ, यही सारे अध्यात्म का विषय है। जिसकी चेतना में जाग्रति है, समयानुसार स्वयं को बदलने का साहस है, जो जीवन से एक ही कामना रखता है कि कैसे मैं एक ऊँचे, सच्चे एवं आदर्श ध्येय की प्राप्ति की दिशा में बढ़ूँ—वही आगे बढ़ पाता है।

जो बाधाओं से नहीं घबराता है, जिसे पता है मुझे कहाँ जाना है, ऐसा व्यक्ति यदि निश्चित कर ले कि हमें पथ की गरिमा के अनुरूप चलना है तथा आदर्श एवं उन्नत जीवन-क्रम को पहचानना है तो स्वत: ही उसकी सारी समस्याएँ एवं व्यामोह समाप्त होने लगते हैं। यही आदर्श जीवन का प्रतिसूचक है एवं इस मार्ग कर चल कर महानता अर्जित की जा सकती है।

देखने में लगता है कि किसी भी उत्कृष्ट ध्येय की प्राप्ति हेतु एक अनिवार्यता मेहनत एवं लगन है, परंतु वास्तव में उससे भी उन्नत चीज है—किसी सही लक्ष्य के पीछे दौड़ लगाना, जिससे जीवन का परिष्कार हो सके, आत्मा को सुख-शांति एवं प्रेम की अनुभूति हो सके।

इसके लिए चाहिए उसकी शक्तियों का किसी ऐसे महान-लक्ष्य के लिए लग पड़ना, जो लोक-कल्याण से संबद्ध हो, जिससे आत्मा की उत्कृष्टावस्था एवं दैवी पूर्णता प्राप्त की जा सके। ऐसे ही लक्ष्य को पाने में मनुष्य की ललक एवं लिप्सा कार्यरत रहती है तथा उसे दैवी अनुदान अपनी ही आत्मा के अभिसिंचन से प्राप्त होते हैं।

इसे कहते हैं पात्रता का विकास, जो मनुष्य की अंतरात्मा की चाह को, उसकी सुषुप्त क्षमताओं को पहचान कर तथा उसे उद्देश्य का भली भाँति ज्ञान करा ऊपर उठाती है। मनुष्य की तड़पन इसलिए है; क्योंकि वह कोई छोटी महत्त्वाकांक्षा को लेकर पैदा नहीं हुआ है, उसे सीधा परमात्मा से मिलना है और यह छोटा कार्य नहीं।

इसके लिए दीर्घकालिक पुरुषार्थ तथा आत्मार्पण की भावना को अपनाना पड़ता है तथा संतोषजनक परिणामों को प्राप्त करने में देरी नहीं करनी होती। जीवन का निर्वाह किसी प्रकार होता रहे, परंतु आदर्श एवं उच्चकोटि की विचारणा हेतु हमें संघर्ष के उस महान पथ से गुजरना होता है, जिसे जीवन-साधना कहते हैं।

जीवन सधता है तो किसी एक माने में नहीं, बल्कि उसका संपूर्ण परिष्कार, उसकी आत्मा का दिग्दर्शन तथा उसे हर्षोल्लास से जीने की पद्धति भी हमें प्राप्त होती है। उसके बिना जीवन में कोई भी परिष्कार का क्रम उन्नत स्थिति को प्राप्त नहीं कर पाता।

जिसका जीवन सुधरा-सँवरा एवं परिष्कृत भावना को प्राप्त हुआ है, केवल वही समझता है कि जीवन की असल में कीमत क्या है। उसे किस रीति-नीति से जिया जाना है तथा उसे आचरण की शुद्धता द्वारा, प्राणों से अभिपूरित कर तथा दैवी-मनोभावना लिए परिपूर्ण अवसर कैसे दिया जाना है?

इसे ही शिथिलता का त्याग तथा महान वर्चस्व की प्राप्ति कहेंगे एवं इस मार्ग पर चलकर

जीवन धन्य हो जाता है, उत्कृष्ट एवं महान कहलाता है। जीवन का आदर्श पथ वही है, जिसमें अपनी आत्मा का गहन अनुसंधान कर, तथा उसे महान प्रयोजनों को सौंपने का उपक्रम चल पड़े, यही जीवन की विशालता का, उसे उन्नत जीवनक्रम प्रदान करने का तथा अपने आदर्श-लक्ष्य की प्राप्ति का राजमार्ग है तथा इस पर चलकर मनुष्यता की सर्वोच्च कुंजी— आध्यात्मिक परिपूर्णता तथा दैवी सुख-शांति की प्राप्ति होती है।

इसे ही पात्रता का विकास तथा विवेक की मनोभूमि की प्रस्थापना कहेंगे। ❑

महर्षि कणाद एक अपरिग्रही तपस्वी थे। उनकी दुर्द्धर्ष तपस्या के कारण समस्त भारतवर्ष में उनकी ख्याति थी। किसानों के फसल काट लेने के बाद जो अन्न के दाने भूमि पर शेष रह जाते थे, उन्हीं को खाकर वे अपना जीवन व्यतीत करते थे। अन्न के कणों पर जीवित रहने के कारण उनका नाम 'कणाद' पड़ा था। उस राज्य के राजा को जब उनके इस महाव्रत का पता चला तो वह उनसे मिलने पहुँचा। राजा के पास अनेकों बहुमूल्य वस्तुएँ थीं, उसने वे सब महर्षि कणाद के चरणों में रख दीं। महर्षि बोले—"राजन्! ये सब ले जाओ। मेरे पास परमात्मा का दिया सब कुछ है—ये सब उन्हें दो, जिनके पास इनकी कमी हो।"

राजा यह सुनकर बड़ा आश्चर्यचकित हुआ और उसने लौटकर यह बात अपनी पत्नी को बताई। राजा की पत्नी विदुषी महिला थी, वह राजा से बोली—"महाराज! आज आपसे भूल हो गई। ऐसे महापुरुष के पास देने नहीं, लेने जाया जाता है। जिसे संसार की सांसारिकता से कोई मतलब नहीं, वही सच्चा ज्ञान देने का अधिकारी हो सकता है।" अब राजा को अपनी भूल का भान हुआ। वह रानी के साथ महर्षि के पास ज्ञानार्जन के भाव से पहुँचा। महर्षि कणाद बोले—"राजन्! सच्चा वैभव सांसारिक वस्तुओं की प्राप्ति से नहीं, आत्मसाक्षात्कार से आता है। उसे प्राप्त करने के बाद अन्य कोई उपक्रम मनुष्य के लिए शेष नहीं रह जाता।" महर्षि की बात सुनकर राजा का जीवन बदल गया।

▶ 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel का एक छोटा सा प्रयास सभी प्रियजनों को गुरु के ज्ञान का अमृत पहुंचाने का...

आप भी इस अमृत के ज्ञान को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने का प्रयास कर गुरुकार्य में भागीदार अवश्य बनें "!

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे। **https://bit.ly/2KISkiz**

◆ पूज्य गुरुदेव द्वारा साधकों को दिए गए दिव्य प्रवचन, अमृत वाणी, ध्यान साधना

◆ परम वन्दनीय माता जी द्वारा गाए गए भावनाशील प्रज्ञा गीत जो कि पूज्य गुरुवर को समर्पित रहे

▼ परम श्रद्धेय जी द्वारा लिखित पुस्तक आध्यात्मिक जीवन पर आधारित वीडियो एवम् आदरणीय चिन्मय भैया जी के दिव्यता से भरे उद्बोधन

एक छोटा सा प्रयास सभी प्रियजनों को गुरु के ज्ञान का अमृत पहुंचाने का...आप भी इस अमृत के ज्ञान को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने का प्रयास कर गुरुकार्य में भागीदार अवश्य बनें "!

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं। धन्यवाद

प्रस्तुत हैं शांतिकुंज ऋषि चिंतन चैनल पर

https://bit.ly/2KISkiz

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

रहस्यों का पिटारा है ब्रह्मांड

इस सदी की सबसे बड़ी खोज करते हुए अंतरराष्ट्रीय वैज्ञानिकों ने पहली बार गुरुत्वाकर्षण तरंगों की झलक पाने का दावा किया है। आइंस्टीन के सापेक्षता के सिद्धांत की खोज के ठीक 100 साल बाद वैज्ञानिकों ने बेहद अहम खोज की है। ऐसा अनुमान है कि इस खोज के बाद इनसान को ब्रह्मांड के चकित कर देने वाले रहस्यों के बारे में पता चल पाएगा।

यह तरंगें प्रकाशीय तरंगों से पूरी तरह भिन्न हैं। वैज्ञानिक इन तरंगों को ग्रेविटेशनल वेव्स भी कहते हैं। इन तरंगों के अस्तित्व के बारे में पिछली एक सदी से अटकलें लगाई जा रही थीं। इनके अस्तित्व के बारे में सर्वप्रथम सैद्धांतिक परिकल्पना प्रख्यात वैज्ञानिक अल्बर्ट आइंस्टीन ने की थी। आइंस्टीन ने सन् 1916 में अपने सामान्य सापेक्षता सिद्धांत का प्रतिपादन करते हुए इन तरंगों के होने की बात कही थी।

वैज्ञानिकों के अनुसार लगभग एक अरब तीस करोड़ साल पहले अंतरिक्ष में दो ब्लैक होल टकराए थे। इनके मिलन से उठी विशाल तरंगें अंतरिक्ष में फैलती हुई 14 सितंबर, 2015 को पृथ्वी तक आ पहुँचीं। अमेरिका में दो भूमिगत अति संवेदी उपकरणों ने इस तरंग को महसूस किया। इन तरंगों के अस्तित्व की निर्णायक रूप से पुष्टि करना सहज नहीं था।

वैज्ञानिक पिछले पचास वर्षों से इन्हें खोजने की कोशिश कर रहे थे, लेकिन इसके लिए उनके पास सटीक उपकरण नहीं थे। अत्यंत संवेदी उपकरण तैयार करने में उन्हें करीब 25 वर्ष लगे। इन्हीं उपकरणों की मदद से अंतरिक्ष में होने वाली असंगतियों के सूक्ष्मतम पैमाने को ढूँढ़ पाना संभव हो सका है। वैज्ञानिकों को उम्मीद है कि इस खोज से दूर के सितारों, आकाशगंगाओं और ब्लैक होल सहित ब्रह्मांड के रहस्यों के बारे में अहम जानकारी जुटाने में मदद मिल सकती है।

आइंस्टीन ने कहा था कि अंतरिक्ष में समय एक जाल की तरह है, जो किसी पिंड के भार से झुकता है; जबकि गुरुत्वाकर्षण तरंगें किसी तालाब में कंकड़ फेंकने से उठी लहरों की तरह हैं। इनका पता दो भूमिगत डिटेक्टरों की मदद से लगाया गया जो बेहद सूक्ष्म तरंगों को भी भाँप लेने में सक्षम हैं। इस योजना को लेजर इंटरफेरोमीटर ग्रेवीटेशनल वेव ऑब्जवेटरी यानी **लीगो** नाम दिया गया है। वैज्ञानिकों को इन तरंगों से संबंधित आँकड़ों की पुष्टि में कई महीने लग गए।

गुरुत्वाकर्षण तरंगें अंतरिक्ष के फैलाव का एक मापक हैं। ये विशाल पिंडों की गति के कारण होती हैं और प्रकाश की गति से चलती हैं और इन्हें कोई चीज रोक नहीं सकती। इन तरंगों की तलाश के लिए चलाए जा रहे प्रोजेक्ट की लागत करीब एक अरब डॉलर है। यह सफल खोज़ दुनिया भर के वैज्ञानिकों की कड़ी मेहनत का नतीजा है।

अल्बर्ट आइंस्टीन ने भविष्यवाणी की थी कि दो ब्लैक होल के टकराने पर गुरुत्व तरंगें उत्पन्न होंगी, लेकिन अभी तक किसी ने भी इनका प्रायोगिक परीक्षण नहीं किया था। अभी तक किसी को भी दो ब्लैक होल के बारे में प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं मिला था।

एक बड़ा प्रश्न है कि ब्लैक होल क्या होता है? ब्लैक होल अंतरिक्ष का वह क्षेत्र है, जहाँ शक्तिशाली गुरुत्वाकर्षण के कारण वहाँ का प्रकाश

बाहर नहीं निकल सकता। इसमें गुरुत्वाकर्षण बहुत ज्यादा इसलिए होता है, क्योंकि पदार्थ को बहुत छोटी जगह में समाहित होना पड़ता है। ऐसा तारे के नष्ट होने की स्थिति में होता है।

यहाँ से प्रकाश बाहर नहीं आ सकता, इसलिए लोग इन्हें नहीं देख सकते। ये अदृश्य होते हैं। किसी तारे के नष्ट होने पर ब्लैक होल बनता है। छोटे और बड़े दो तरह के ब्लैक होल हो सकते हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार सबसे छोटे ब्लैक होल एक अणु के बराबर छोटे होते हैं। ये ब्लैक होल छोटे जरूर होते हैं, लेकिन उनका द्रव्यमान एक पहाड़ के बराबर होता है। बड़े ब्लैक होल यानी स्टेलर का द्रव्यमान सूर्य के द्रव्यमान से 20 गुना तक ज्यादा होता है।

सबसे बड़े ब्लैक होल को सुपरमैसिव कहा जाता है; क्योंकि उनका द्रव्यमान 10 लाख सूर्यों से भी ज्यादा होता है। हमारी आकाश गंगा में सुपरमैसिव ब्लैक होल का नाम सैजिटेरियस है। इसका द्रव्यमान 40 लाख सूर्यों के बराबर है। बहुत बड़े यानी अत्यंत विशाल ब्लैक होल सभी आकाशगंगाओं के केंद्र में पाए जाते हैं। गुरुत्व तरंगों की खोज से पहले ब्लैक होल का पता लगाना मुश्किल था; क्योंकि ये प्रकाश उत्पन्न नहीं करते थे; जबकि सभी खगोलीय भौतिकी उपकरण प्रकाश का इस्तेमाल करते हैं।

दो ब्लैक होल में से प्रत्येक ब्लैक होल का द्रव्यमान करीब 80 सूर्यों के बराबर था। जैसे ही गुरुत्वाकर्षण की वजह से दोनों ब्लैक होल एक-दूसरे के करीब आए, उन्होंने तेजी से एकदूसरे की परिक्रमा आरंभ कर दी। आपस में टकराने से पहले उन्होंने प्रकाश की गति हासिल कर ली थी। उनके उग्र विलय से गुरुत्व तरंगों के रूप में प्रचंड ऊर्जा निकली, जो सितंबर में पृथ्वी पर पहुँची।

जरा कल्पना करें कि एक अरब साल पहले निकली ऊर्जा पिछले साल सितंबर में पृथ्वी पर पहुँची है। इसी से अंदाजा लगाया जा सकता है कि अंतरिक्ष में यह टक्कर कितनी दूर हुई होगी। वैज्ञानिकों के अनुसार सितंबर में पृथ्वी पर पहुँचने वाली तरंगें दो ब्लैक होल के विलय से पूर्व अंतिम क्षण में उत्पन्न हुई थीं। भारतीय वैज्ञानिकों ने गुरुत्वाकर्षण तरंगों की खोज के लिए महत्त्वपूर्ण परियोजना में डाटा विश्लेषण सहित अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

इंस्टिट्यूट ऑफ प्लाज्मा रिसर्च गांधीनगर, इंटर यूनिवर्सिटी स्टेट फॉर एस्ट्रोनामी एंड एस्ट्रोफिजिक्स पुणे और राजारमन—सेंटर फॉर एडवांस्ड टेक्नॉलोजी इंदौर, सहित कई संस्थान

ऋतस्य हि शुरुधः सन्ति पूर्वी ऋतस्य धीतिर्वृजिनानि हन्ति।

अर्थात सही कर्म अपना फल अवश्य देता है। उचित कर्त्तव्य की शक्तियाँ अनंत हैं, उचित बुद्धि पापों का नाश करती है।

इस परियोजना से जुड़े थे। गुरुत्वाकर्षी तरंगों की खोज की घोषणा आईयूसीएए पुणे और वाशिंगटन जैसी अमेरिका में वैज्ञानिकों ने समानांतर रूप से की। भारत उन देशों में से भी एक है, जहाँ गुरुत्वाकर्षण प्रयोगशाला स्थापित की जा रही है।

यह खोज दुनिया भर के वैज्ञानिकों की बड़ी उपलब्धि है, जिनमें भारतीय वैज्ञानिक भी शामिल हैं। ब्रह्मांड को अभी तक हमने सिर्फ प्रकाश में देखा है, लेकिन वहाँ जो घटित हो रहा है, उसका हम सिर्फ एक हिस्सा ही देख पा रहे हैं। यह ब्रह्मांडीय भौतिकी और खगोल विज्ञान के लिए एक बहुत बड़ी उपलब्धि है और इससे ब्रह्मांड को समझने के नए रास्ते खुलेंगे। ब्रह्मांड एक रहस्य है और इस रहस्य के उजागर होने से जीवन और प्रकृति के नए आयाम खुलेंगे। ❑

कुंठाओं की कर्कशता

कुंठा निराशाजन्य अतृप्त भावना है। यह विफलता के कारण होने वाली घोर निराशा है। कुंठा वह शरम या संकोच है, जो आगे बढ़ने में बाधक होती है। यह विषाद का ही अन्य रूप है। इसे हताशा भी कहते हैं। वर्तमान भौतिकवादी समाज में जीवन अस्तित्व का संघर्ष बढ़ता जा रहा है।

आधुनिक प्रौद्योगिकी संचार क्रांति ने समाज की गति को न केवल तेज कर दिया है, वरन समाज की पुरानी संरचना को भी प्रभावित किया है। पुराने स्थापित मूल्य बहुत तेजी से बदल रहे हैं। जीवन की आपा-धापी एवं भौतिक सुविधाओं की चाह ने मनुष्य के अंदर अनेक तरह की कुंठाओं को भी जन्म दिया है।

कुंठा यानी कि 'फ्रस्ट्रेशन' जो कि जीवन में सबके लिए ही एक चिरपरिचित भावना है। हम सभी इसकी अनुभूति कभी-न-कभी करते हैं, समाज में यह अब ज्यादा तेजी से पाँव पसारने लगी है।

मनोवैज्ञानिक रूप से इसे प्रेरणायुक्त व्यवहार की संतुष्टि के कठिन या असंभव हो जाने के कारण उत्पन्न होने वाली भावना कह सकते हैं। यदि व्यक्ति कुछ पाना चाहता है और उसे पा लेता है तो संतुष्टि का अनुभव करता है, परंतु किसी वस्तु को पाने का प्रयास करने पर फलप्राप्ति में आई रुकावट या असफलता कुंठा को जन्म देती है।

यों तो प्रत्येक व्यक्ति अपनी समस्याओं को हल करने का प्रयास करता है, लेकिन हममें से शायद ही कोई ऐसा हो, जो इन समस्याओं को पूरी तरह या पूर्ण संतुष्टि से हल कर पाए।

अधिक सफल व्यक्तियों के मन में कुंठा की भावना पैदा ही नहीं होती ऐसी बात नहीं है, बल्कि उन्हें कुंठा उत्पन्न करने वाली स्थितियों का जो सामना करना पड़ता है—वे उसे आसानी से पार कर जाते हैं।

प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक फ्रायड का विचार है कि कुंठा की उत्पत्ति उस समय होती है, जब व्यक्ति के सुखप्राप्ति व्यवहार या दुःख हटाने वाले व्यवहार में बाधा उत्पन्न होती है। अनेक बार व्यक्ति कुंठा उत्पन्न करने वाली दशा से बचने के लिए प्रतिगमनात्मक प्रतिक्रिया का सहारा लेते हुए वास्तविक स्थिति से ही पलायन कर जाता है। कुंठा के कारण व्यक्ति आक्रामक व्यवहार भी करने लगता है।

कुंठा की मात्रा का यदि लैंगिक आधार पर विभाजन करें तो यह पुरुषों में स्त्रियों की तुलना में अधिक पाई जाती है, परंतु इसका कारण जन्मजात नहीं होता है। हमारी सामाजिक संरचना पुरुष प्रधान है।

वहाँ पर चुनौतीपूर्ण एवं कठिन कार्यों से सामना होने के कारण पुरुषों में ऐसा भाव पाया जाता है। जो महिलाएँ पुरुषों के ही समान स्तर के क्रियाकलापों में संलग्न हैं, वे भी इस मामले में पुरुषों की ही भाँति कुंठा का सामना करती हैं।

किसी व्यक्ति में कितनी मात्रा में कुंठा उत्पन्न होगी, इसका निर्धारण दो बातों से होता है—पहला

▶ 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

उस व्यक्ति विशेष में प्रेरणा की मात्रा, दूसरा निर्धारित लक्ष्य से दूरी।

यदि व्यक्ति में प्रेरणा का अभाव है तो इच्छित लक्ष्य की प्राप्ति में असफलता ही हाथ लगेगी; जबकि व्यक्ति, प्रेरणा की कमी पर ध्यान न देकर लक्ष्यप्राप्ति न होने के लिए या तो बाह्य दंडात्मक प्रतिक्रिया अर्थात परिस्थितियों या दूसरे व्यक्तियों पर दोषारोपण करेगा या अंत:दंडात्मक प्रतिक्रिया अपनाकर स्वयं को ही अयोग्य समझता रहेगा।

निर्धारित लक्ष्य से दूरी, सफलता प्राप्त होने तक धैर्य की माँग करती है। इस सफलता तक पहुँचने में व्यय होने वाला समय और श्रम जब तक फलीभूत नहीं हो जाता, व्यक्ति कुंठा के घेरे में स्थायी या अस्थायी रूप से उलझ सकता है।

कुंठा पैदा करने या बढ़ने में जिम्मेदार कारकों में सर्वप्रमुख हैं—प्रतिस्पर्द्धा, उच्च आकांक्षा स्तर, सामाजिक-पारिवारिक संबंधों में तनाव, सामाजिक-आर्थिक स्तर, समाज एवं कार्य का वातावरण एवं शैक्षिक स्तर। कुछ विशेष मामलों में जन्मजात अयोग्यताएँ, शारीरिक सौंदर्य में कमी भी कुंठा का कारण हो सकती हैं।

शहरी एवं ग्रामीण जीवन में भिन्नता है, ग्रामीण पृष्ठभूमि का व्यक्ति जब शहर की ओर पलायन करता है तो वहाँ के नए वातावरण में घुल-मिल न पाने के कारण, प्रारंभ में कुंठा का अनुभव कर सकता है, परंतु वही व्यक्ति नगरीय जीवन का अभ्यस्त होते ही इस कुंठा से मुक्त हो जाता है। यह कुंठा के उत्पन्न होने में बाह्य वातावरण के महत्त्व को दरसाता है।

सामाजिक बंधन यदि व्यक्ति की इच्छापूर्ति में बाधक बनें तो भी कुंठा को जन्म देते हैं। कुंठा उत्पत्ति का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कारण मानसिक अंतर्द्वंद्व है। मानसिक अंतर्द्वंद्व के निम्न तीन प्रकार होते हैं।

ग्राह्य-त्याज्य अंतर्द्वंद्व—यदि व्यक्ति किसी आवश्यकता की पूर्ति करना चाहता है साथ ही उससे उत्पन्न अन्य दशाओं से बचना भी चाहता है, जैसे बेईमानी से कमाया धन, धनप्राप्ति की आवश्यकता तो पूर्ण करता है, परंतु व्यक्ति नैतिकता के पतन के कारण उसी धनप्राप्ति के तरीके से बचना भी चाहता है।

ग्राह्य-ग्राह्य अंतर्द्वंद्व—यदि व्यक्ति दो आवश्यकताएँ पूर्ण करना चाहे, लेकिन उसकी दशाएँ दोनों की पूर्ति करने में सफल नहीं होती हैं; जैसे किसी युवक को यदि नौकरी के लिए दूसरे शहर में जाना हो, साथ ही वृद्ध माता-पिता की देख-भाल के लिए घर पर रहना भी आवश्यक हो तो भी कुंठा होती है।

त्याज्य-त्याज्य अंतर्द्वंद्व—वह दशा जिसमें व्यक्ति एक ही अवस्था की दो प्रतिक्रियाओं से बचना चाहता है। जैसे किसी व्यक्ति का किसी से झगड़ा हो जाए और वह अपमानित होकर रह जाए तो सामाजिक निंदा एवं यदि झगड़ा करे तो दुश्मनी, इन दोनों ही अवस्थाओं से बचने की मानसिक द्वंद्वात्मक स्थिति आखिरकार कुंठा को ही जन्म देगी।

कुंठा से बचाव व्यक्ति एवं समाज के मानसिक स्वास्थ्य के लिए अति आवश्यक है; क्योंकि कुंठित व्यक्ति अपने साथ-साथ समाज का भी अहित करता है। यदि वो ऐसा न भी करे तो भी समाज को एक मानव इकाई की मानसिक क्षमता के योगदान से तो हाथ धोना ही पड़ता है।

कुंठा से बचने के लिए व्यक्ति को अपने लक्ष्य को अपनी योग्यताओं की सीमा के भीतर ही निर्धारित करना चाहिए। व्यापक दृष्टिकोण अपनाते हुए समाज के प्रत्येक व्यक्ति पर दृष्टिपात करें तो हम पाएँगे कि पूर्णतया संतुष्ट कोई भी नहीं है।

अत: हम अपने जीवन में यदि सब कुछ नहीं पा सकें तो इसमें कुंठित होने की क्या आवश्यकता है ? अत: कुंठा उत्पन्न करने वाली दशाओं से बचें, सामाजिक सहयोग एवं सामाजिक क्रियाकलापों में पूरा सहयोग दें, अपनी अभिरुचि के कलात्मक कार्यों में व्यस्त रहें एवं प्रत्येक दशा के प्रति धनात्मक (पॉजिटिव) दृष्टिकोण अपनाएँ।

ज्ञानवर्द्धक साहित्य का अध्ययन निश्चित रूप से आत्मविश्वास एवं मानसिक परिपक्वता को बढ़ाता है तथा कुंठा-निवारण की शक्ति प्रदान करता है। साथ ही एक अच्छा मित्र समूह भी इस दिशा में सहयोगात्मक भूमिका निभा सकता है।

यदि अपने कार्य को लगनपूर्वक किया जाए और उसके परिणाम के प्रति चिंता को छोड़ दिया जाए तो कुंठा से बचा जा सकता है। मन जितना सहज, सामान्य एवं निर्द्वंद्व होता है, कुंठा उतनी दूर होती जाती है। ❑

स्वामी विवेकानंद अमेरिका प्रवास पर निकलने वाले थे। जाने से पूर्व वे माँ सारदा से आशीर्वाद लेने पहुँचे। आशीर्वाद देने के स्थान पर सारदा माँ ने उन्हें सब्जी काटने का चाकू उठाकर देने को कहा।

स्वामी विवेकानंद के चाकू उठाकर देने पर माँ सारदा बोलीं—"मेरा आशीर्वाद सदा तेरे साथ है। जाओ, खूब प्रगति करो और अमेरिका में जाकर अपने गुरु का, भारत का नाम रोशन करो।"

स्वामी विवेकानंद ने पूछा—"इस आशीर्वाद का चाकू देने से क्या संबंध है ?"

माँ सारदा बोलीं—"जब किसी साधारण व्यक्ति से चाकू माँगा जाता है तो वह मूठ अपने हाथ में रखकर धार की तरफ से चाकू दूसरे को देता है, परंतु तुमने धार अपने हाथ में रखी और मूठवाला भाग मेरी तरफ किया। सच्चे साधु का यही लक्षण है कि वह स्वयं कष्टों को स्वीकार करता है और दूसरों के कल्याण की कामना करता है। इस छोटे-से घटनाक्रम ने बड़े कार्य के लिए तुम्हारी पात्रता सिद्ध कर दी और तुम इस आशीर्वाद के हकदार बने।"

पेंगुइन पक्षियों का रोचक संसार

दक्षिण ध्रुव के दुर्गम बरफीले इलाकों में पाए जाना वाला, समुद्र की गहराइयों में गोता लगाने वाला, मासूम-सा दिखने वाला पेंगुइन अपनी मस्तमौला हरकतों के कारण सबका ध्यान आकर्षित करता है। हालाँकि पेंगुइन उड़ नहीं सकता, लेकिन कूदते-फाँदते व पेट के बल पर घिसटते हुए यह पक्षी सागर की लहरों के साथ एक कुशल तैराक की भाँति खेलता, इठलाता सबको विस्मित करता है। प्रस्तुत है बिन पंख के बरफीले इलाके के इस अद्‌भुत पक्षी के रोचक संसार का एक संक्षिप्त दिग्दर्शन।

पेंगुइन विश्व का एक ऐसा पक्षी है, जो उड़ नहीं सकता, लेकिन बरफ पर चल सकता है, सागर में कूद-फाँद सकता है और इसकी गहराइयों में तैर सकता है। समय के साथ इसके किनारे के पंख एक ऐसा रूप ले चुके होते हैं, जिनके सहारे यह पानी में तैरता है और बरफ पर पेट के बल पर सरकते हुए आगे बढ़ता है। अपने पैर व पूँछ के सहारे यह धरातल पर सीधे खड़े रह सकता है।

पृथ्वी का बरफीला दक्षिणी गोलार्द्ध इसका मूल स्थान है। इसकी मुख्य प्रजातियाँ अंटार्कटिका व आस-पास के क्षेत्रों में पाई जाती हैं। इसके साथ इसकी कुछ प्रजातियाँ साथ लगे शीतोष्ण प्रदेशों में भी फैली हुई हैं। पेंगुइन की लगभग 17 प्रजातियाँ हैं, जिनमें लगभग 13 विलुप्ति के कगार पर हैं। जिनमें कुछ भूमध्य रेखा के उत्तर की ओर पाई जाती हैं और अंटार्कटिका तथा उप-अंटार्कटिका में केवल 8 पेंगुइन प्रजातियाँ देखी जा सकती हैं। इनका विस्तार दक्षिण अफ्रीका, चिली, न्यूजीलैंड, अर्जेंटीना और ऑस्ट्रेलिया तक देखा जा सकता है।

पेंगुइन एक मांसाहारी पक्षी है, जो अपना भोजन समुद्र से प्राप्त करता है। इनका मुख्य भोजन रहता है—मछलियाँ, झींगा व सागर में पाए जाने वाले अन्य छोटे जीव। ये भोजन के साथ कंकड़-पत्थर भी खा जाते हैं, जो इनके भोजन को पचाने में सहायता करते हैं। साथ ही ये सागर की गहराइयों में गोता लगाने में पेंगुइन के शरीर को आवश्यक भार प्रदान करते हैं।

पेंगुइन पानी में औसतन 900 फीट गहराई तक तैर सकता है और 20 मिनट तक साँस रोक सकता है। पेंगुइन सागर में 15 किमी प्रतिघंटे की गति से तैर सकता है। पेंगुइन के दाँत नहीं होते, ये अपने शिकार को खाने के लिए चोंच का उपयोग करता है। पेंगुइन का आधा जीवन पानी में बीतता है। इसकी औसतन आयु 15 से 20 वर्ष की होती है।

मनुष्य के साथ पेंगुइन का दोस्ताना संबंध देखने को मिलता है। सागर में पेंगुइन को लेपर्ड सील, किलर व्हेल, शार्क मछलियों आदि से ही अधिक खतरा रहता है। इनका मनुष्य के द्वारा शिकार न के बराबर ही होता है, अतः इन्हें मनुष्यों से कोई विशेष भय नहीं लगता है। अतः जब भी मनुष्य से इनका सामना होता है तो ये बिना हिचकिचाहट के पास आते हैं। नियमों के अनुसार इनसे 10 फीट से नजदीक जाने की मनाही रहती है, लेकिन यदि ये पास आ जाएँ, तो इन्हें बिना

किसी छेड़खानी के मिल सकते हैं। पेंगुइन कॉलोनी बनाकर झुंडों में रहते हैं।

बरफ से ढके दुर्गम इलाकों में इनकी अनोखी बस्तियाँ देखी गई हैं। सैटेलाइट तस्वीरों के माध्यम से ही इनकी पहचान की जाती रही है। इनके मल एकत्र होने से वहाँ भूरे रंग के निशान बरफ पर दिखते हैं, जिनसे इनकी पहचान दूर से ही आसानी से हो जाती है।

प्रजनन के दौरान पेंगुइन जोड़ा बनाकर रहते हैं। मादा अंडे देती है और नर इनको सेते हैं। इस बीच मादा सागर में उतरकर भोजन एकत्र करती है। ठंढ बढ़ने पर पेंगुइन सटकर झुँडों में बैठते हैं, जिससे कि एकदूसरे को आवश्यक गरमाहट मिल सके। मालूम हो कि पेंगुइन-60 डिगरी सेंटीग्रेड के तापमान में भी इन दुर्गम क्षेत्रों में रहते हैं।

पेंगुइन दक्षिण ध्रुव के दुर्गम क्षेत्रों में विषमतम परिस्थितियों में स्वयं को ढाल चुके हैं, लेकिन जलवायु परिवर्तन इनके अस्तित्व के लिए खतरे की घंटी बनकर आ रहा है। ग्रीन हाउस गैसों के अत्यधिक उत्सर्जन के कारण ग्लेशियर तेजी से पिघल रहे हैं, जो पेंगुइन के लिए खतरा बने हुए हैं। इनके चलते बड़ी संख्या में इनके बच्चे मारे जा रहे हैं।

मालूम हो कि प्रजनन की प्रक्रिया को पूरा करने के लिए पेंगुइन को 9 महीने तक ठोस बरफ चाहिए होती है। इनके रोंएदार निचले हिस्से को जलरोधी पंख में ढालने के लिए बरफ में रहना आवश्यक होता है। बिना पूरी तरह तैयार हुए पानी में उतरने से इनके बच्चों की मौत हो जाती है। अनुमान है कि इसी गति से बरफ पिघलती रही तो सदी के अंत तक 90 प्रतिशत पेंगुइन प्रजाति समाप्त हो सकती है।

यदि जलवायु-परिवर्तन को हम थाम सकें तो यह भविष्यवाणी टल सकती है। इसलिए पेंगुइन के संरक्षण के प्रयास जारी हैं। हर वर्ष इनके संरक्षण को बढ़ावा देने के उद्देश्य से 25 अप्रैल को विश्व पेंगुइन दिवस मनाया जाता है। मौसम परिवर्तन के अतिरिक्त पेंगुइन के अस्तित्व के लिए खतरा सागरीय प्रदूषण, अनावश्यक मानवीय हस्तक्षेप तथा मछली उद्योग से है।

बहुत हद तक मानव अपनी जीवनशैली को बदलकर, ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करके इनके अस्तित्व को सुरक्षित व संरक्षित कर सकता है।

इन सुंदर, मासूम एवं रोचक पक्षियों का अस्तित्व बहुत कुछ इनसान के साथ जुड़ा हुआ है। इनसान अपनी समझदारी एवं संवेदनशीलता के आधार पर जलवायु-परिवर्तन को नियंत्रित कर पेंगुइन के संरक्षण में अपना निर्णायक योगदान दे सकता है। ❑

हमें भीतर और बाहर से उल्लास और उत्साह ही उमगता दीखता है। जीवन को उलट-पुलटकर देखने पर उसमें चंदन जैसी सुगंध ही आती दीखती है। भूतकाल की ओर मोड़कर देखते हैं तो शानदार दीखती है। वर्तमान का निरीक्षण करते हैं तो उसमें भी उमंगें छलकती दीखती हैं। भविष्य पर दूरदृष्टि डालते हैं तो प्रतीत होता है कि भगवान के दरबार में अपराधी बनकर नहीं जाना पड़ेगा। परीक्षा में अच्छे नंबर लाने वाले विद्यार्थी और प्रतिस्पर्द्धा जीतने वाले खिलाड़ी की तरह उपहार ही मिलेगा। ***—परमपूज्य गुरुदेव***

जीवन का आधार है आत्मविश्वास

आत्मविश्वास जीवन का आधार है। इससे जीवन का विकास एवं पोषण होता है। जिंदगी में ऐसे कई दौर आते हैं, जब इनसान डगमगा जाता है और इसका बहुत बड़ा कारण होता है—आत्मविश्वास की कमी। दूसरों को अपने आप से ऊँचा समझना, हमेशा हीन भावना से ग्रसित रहना आदि इसके लक्षण हैं। जब कोई कह रहा हो तो पूरे ध्यान से सुनना चाहिए। इससे सामने वाले को आत्मसंतुष्टि मिलती है साथ ही वह हमारे बारे में अच्छा नजरिया बनाता है।

अमेरिका के लोकप्रिय राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन का कहना था कि 'काम में जुटना चिंता का बहुत बढ़िया इलाज है। इसलिए जब भी कोई चिंता सताए तो अपने शारीरिक श्रम में समझदारी लगाना चाहिए। श्रम से मस्तिष्क में तनाव नहीं उत्पन्न होता, क्योंकि मांसपेशियों की सक्रियता से तनाव की दिशा बदल जाती है।'

प्रसिद्ध दार्शनिक मार्क्स का कहना था कि हमारे विचारों से ही हमारी जिंदगी बनती है। अगर हमारे विचार सुखद होंगे, तो हम सुखी रहेंगे। अगर हम असफलता के बारे में सोचेंगे तो हम अवश्य असफल हो जाएँगे। हमारे मानसिक नजरिए का प्रभाव फिर हमारी शारीरिक क्षमता पर भी पड़ता है।

हमें हर समस्या के प्रति सकारात्मक व आशावादी नजरिया रखना चाहिए। ऐसी कोई समस्या नहीं है, जिसे हम मेहनत, लगन, आस्था और ईश्वर की प्रार्थना से सुलझा न सकें। हमारे दिल में कोई दुःख-दरद हो, तो इसे दिल में दबाकर नहीं रखना चाहिए।

कहा गया है कि अच्छी तरह रो लेने के बाद मानसिक व भावनात्मक दुःखों से राहत मिल जाती है। इजराइली प्रधानमंत्री गोल्डा मायर ने एक बार कहा था कि 'जो दिल खोलकर रो नहीं सकते, वे दिल खोलकर हँस भी नहीं सकते।' हर दिन सुबह बिस्तर छोड़ने के साथ मन में यह संकल्प दोहराना चाहिए कि आज का दिन बहुत अच्छा बीतेगा; क्योंकि हम अपना सब कुछ ईश्वर के हाथ में सौंप रहे हैं।

जो लोग निराशावादी बातें करते हैं, उनसे दूर रहना चाहिए और उनके साथ बहुत ज्यादा चर्चा नहीं करनी चाहिए। आने वाले कल के बारे में विचार करना चाहिए, किंतु चिंता नहीं करनी चाहिए। वास्तव में जिंदगी हर पल जीने के लिए होती है। इसलिए हर दिन और हर घंटे इसे जीना चाहिए।

जब हमको नींद नहीं आती, तो क्या हम चिंतित हो जाते हैं ? याद रखना चाहिए कि अनिद्रा के बारे में चिंता करने से अनिद्रा से ज्यादा नुकसान होता है। शिकागो विश्वविद्यालय में हुई एक रिसर्च के अनुसार नींद की कमी के कारण आज तक कोई नहीं मरा। वैसे प्रकृति ने यह व्यवस्था कर रखी है कि जब नींद आएगी, हम अपने आप सो जाएँगे। चिंता कम करने की एक अच्छी दवा है किसी विश्वसनीय व्यक्ति से बात करना।

कहा गया है कि दिल का गुबार निकाल देने से बोझ हलका हो जाता है और तत्काल राहत मिलती है। जब भी थकान या चिंता सताए तो फर्श पर लेट जाना चाहिए। अगर लेट नहीं सकते तो

कुरसी पर बिलकुल सीधे बैठना चाहिए। धीरे-धीरे गहरी साँस लेनी और छोड़नी चाहिए।

कोई भी कार्य करें, मन लगाकर करना चाहिए अर्थात कार्य में दिलचस्पी पैदा करनी चाहिए। इससे थकान कम महसूस होगी और चिंताएँ भी कम होंगी। जब तक हमको दिल में यह विश्वास है कि हम सही हैं, तब तक इस बात की चिंता नहीं करनी चाहिए कि लोग क्या कहेंगे? हमारा दिल जो कहता है, वही करना चाहिए। आलोचना तो हर हाल में होगी। कुछ करेंगे तो भी आलोचना होगी और कुछ नहीं करेंगे तो भी होगी।

जिन्हें हम पसंद नहीं करते, उनके बारे में चर्चा बिलकुल नहीं करनी चाहिए; क्योंकि इससे हम अपना ही नुकसान करते हैं। जब भी मौका मिले दिन में दो-तीन बार 5-10 मिनट की झपकी लेनी चाहिए। इससे अतिरिक्त ऊर्जा मिलती है। डर सबसे शक्तिशाली विचार है, परंतु एक विचार डर से भी शक्तिशाली है, वह है आस्था।

आस्था ही एकमात्र शक्ति है, जिसके सामने डर टिक नहीं सकता, अगर हम अपने अंदर आस्था भर लें तो डर अपने आप बाहर आ जाएगा। हर दिन कुछ देर का समय निकालकर मौन रहना चाहिए।

किसी से बात नहीं करनी चाहिए, सिर्फ ईश्वर के बारे में सोचना चाहिए और ईश्वर ने जो कुछ हमको दिया है, उसके लिए उसे धन्यवाद देना चाहिए। हम अपने लक्ष्य तक तभी पहुँच सकते हैं, जब हमको यह मालूम हो कि हमारा लक्ष्य क्या है।

ज्यादातर लोग जिंदगी में कहीं नहीं पहुँच पाते, कारण वे जानते ही नहीं कि वे कहाँ पहुँचना चाहते हैं। जिंदगी में सफलता पाने की प्रबल इच्छा है तो हमको काम में पूरे दिल से जुट जाना चाहिए। हम जो भी कर रहे हैं, उसमें समर्पण भाव से अपने को डुबो देना चाहिए।

जब हमारी शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक शक्तियाँ पूरी एकाग्रता से सक्रिय हो जाती हैं, तब कोई भी अवरोध हमारी राह की बाधा नहीं बन सकता है। अतः हमें अपने स्वयं पर विश्वास करना चाहिए। स्वयं पर विश्वास ही हमें हर समस्या एवं संघर्ष से आगे बढ़ाता है। ❑

काशी के संत बाबा गुलाबचंद अघोरी चमत्कारी सिद्ध के रूप में प्रसिद्ध थे। उन्हें साहित्य से भी गहरा लगाव था। एक बार प्रसिद्ध हिंदी साहित्यकार सुदर्शन सिंह चक्र, बाबा से मिलने पहुँचे।

बाबा उनकी कविता सुनकर प्रसन्न हो गए और उनसे बोले—"आज तुम जो भी माँगोगे, तुम्हें मिलेगा।" चक्र जी ने कहा—"बाबा! मैं तो मात्र भगवद्भक्ति का आकांक्षी हूँ।"

बाबा ने चक्र जी से पुनः कुछ माँगने के लिए कहा। इस बार चक्र जी बोले—"अच्छा बाबा! फिर यह आशीर्वाद दें कि भारतभूमि पर कोई भी व्यक्ति रोगी या दरिद्र न रहे।" उनकी यह माँग सुनकर बाबा गुलाबचंद रोने लगे और चक्र जी से बोले—"बेटा! आज तो तूने मेरा अभिमान नष्ट कर दिया। मुझे महसूस हो गया कि मनुष्य सर्वसमर्थ थोड़े ही है। सबका दुःख तो मात्र भगवान दूर कर सकते हैं।"

जीवनदायी पेड़ों से मिलते अनुदान

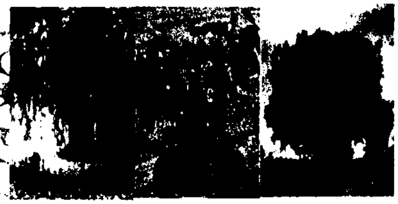

दुनिया में हर क्षण फुटबॉल मैदान जितना वर्षा वन का क्षेत्र नष्ट कर दिया जाता है। पेड़ों से 5000 से भी ज्यादा वस्तुएँ बनाई जाती हैं, जिनमें मकान, फर्नीचर, पेंसिल, बरतन, पुस्तकें, अखबार, कपड़े आदि शामिल हैं। ज्यादातर वर्षा वनों का सफाया इमारती लकड़ी और उसके बाद कृषि, पशुपालन आदि के लिए किया जाता है।

100 वर्षों से भी कम समय में दुनिया के आधे जंगल काटे या जलाए गए हैं। वनों को कई चीजें नुकसान पहुँचाती हैं, जैसे कि आग, वायु प्रदूषण, तूफान, कीट, आक्रमण करने वाली प्रजातियाँ आदि। हर वर्ष जंगलों का 1 प्रतिशत जो कि न्यूजीलैंड के क्षेत्रफल के बराबर है, आग से नष्ट हो जाता है। इससे आर्थिक क्षति के अलावा जैव-विविधता को तो नुकसान होता ही है, वायुमंडल में कार्बन भी उत्सर्जित होता है।

ज्यादातर आगजनी की वजह मनुष्य ही हैं। जलवायु-परिवर्तन के असर से बढ़ते तापमान से बचने के लिए पेड़ों की छाया में चले जाना समाधान नहीं है। मौसम के गरम मिजाज के कारण कुछ पौधों की पत्तियाँ सिकुड़ने लगी हैं। पेड़-पौधे जलवायु-परिवर्तन के साथ तेजी से तालमेल बैठाने में सक्षम होते हैं, पर तब भी इतने व्यापक परिवर्तन इनके अस्तित्व को चुनौती देते नजर आते हैं।

हमारी पृथ्वी पर पेड़ सबसे ऊँचे जीवधारी हैं। ये पृथ्वी के सबसे अहम प्राकृतिक संसाधनों में से एक हैं। ये हमारी वायु आपूर्ति को न सिर्फ स्वच्छ रखते हैं, बल्कि जल की गुणवत्ता को भी सुधारते हैं। भूक्षरण को रोकते हैं, निर्माण-कार्यों के लिए लकड़ी उपलब्ध कराते हैं, भोजन व छाया प्रदान करते हैं, ध्वनि प्रदूषण को कम करते हैं, भूदृश्यावलियों को खूबसूरती प्रदान करते हैं और दवाओं के लिए कच्चा माल मुहैया कराते हैं।

दुनिया में पेड़ों की लगभग 100000 प्रजातियाँ हैं और पेड़ करीब 180000000 वर्ष पहले अस्तित्व में आए थे। वर्षावन पृथ्वी के सबसे पुराने जीवित पारिस्थितिकीय तंत्र हैं। ये पृथ्वी की सतह के 2 फीसद हिस्से तथा 6 फीसद भू-भाग को ढके हुए हैं, इसके बावजूद ये वन दुनिया के आधे से भी अधिक जंतुओं और वनस्पतियों की प्रजातियों के घर हैं। पेड़ों से मिलने वाली छाया और हवा जो शीतलता प्रदान करती है, उससे हर साल हीटिंग और कूलिंग का खरच 2.1 अरब डॉलर तक घट जाता है।

एक अकेला पेड़ हर साल अनुमानतः 260 पौंड ऑक्सीजन प्रदान करता है। इसका मतलब है कि दो परिपक्व पेड़ हर साल इतनी ऑक्सीजन पैदा कर लेते हैं, जो चार लोगों के परिवारवालों के लिए पर्याप्त है। वहीं एक पेड़ हर साल इतनी कार्बन-डाइऑक्साइड सोखता है, जितना कि एक कार 26000 मील की यात्रा में पैदा करती है। अपने जीवनकाल में एक औसत पेड़ एक टन कार्बन-डाइऑक्साइड (Co2) सोख लेता है। शहरी क्षेत्रों में एक पेड़ की औसत आयु केवल 8 साल होती है।

वर्तमान में पृथ्वी में केवल 3 सबसे बड़े जंगल बचे हैं। ये हैं ब्राजील का अमेजन वर्षावन तथा रूस और कनाडा के उत्तरी वन। जंगल बड़ी संख्या में उत्पादों को मुहैया कराते हैं। जंगली पौधों और जंतुओं की करीब 15000 प्रजातियाँ भोजन, दवा और अन्य कार्यों में इस्तेमाल होती हैं।

पृथ्वी की समस्त ऑक्सीजन प्रकाश संश्लेषण (फोटो सिंथेसिस) वृक्षों द्वारा पैदा होती है। इस प्रक्रिया में वनस्पतियाँ ग्लूकोज बनाने के लिए जल और कार्बन-डाइऑक्साइड का सम्मिश्रण करती हैं। पेड़ एक ऐसा रसायन भी पैदा करते हैं, जिसके चलते वे शून्य से 40 डिगरी फॉरेनहाइट नीचे के तापमान में भी जमने से बचे रहते हैं।

पेड़ अपने पोषण का 90 फीसद वायुमंडल से हासिल करते हैं। मिट्टी से वह केवल 10 फीसद ग्रहण करते हैं। पेड़ ऊपर की तरफ से बढ़ते हैं न कि नीचे से, जैसा कि आमतौर पर माना जाता है। पेड़ उम्र बढ़ने के कारण नहीं मरते। इनकी मौतें आमतौर पर कीटों या बीमारियों के चलते या फिर मनुष्यों के कारण होती हैं। जमीन को शीतल कर तथा जल को आकाश में वाष्पित कर पेड़ वर्षा को प्रवृत्त कर सकते हैं।

एक एकड़ जमीन में लगे मैपल वृक्ष हर दिन 20,000 गैलन पानी हवा में पहुँचा सकते हैं। दुनिया में सबसे भारी-भरकम जिंदा पेड़ अमेरिका का जायंट सीक्योइया है।

यह करीब 30 मंजिला इमारत जितना ऊँचा है। इसका घेरा 83.3 फीट और वजन अनुमानतः 2,756 टन है। इसकी उम्र 4000 से 5000 वर्ष के बीच आँकी गई है। यह उस समय उग रहा था, जब मिस्र में पिरामिडों का निर्माण हो रहा था।

पेड़ हमारे प्राणों के आधार हैं। अतः हमें पेड़ों की सुरक्षा, संरक्षण एवं विकास के दायित्व का निर्वहन करना चाहिए। ❑

एक फकीर शाह अकबर के पास कुछ माँगने गया। शाह नमाज पढ़ रहा था, सो फकीर पास ही बैठ गया। उसने सुना कि शाह खुदा से कह रहा है—''ऐ खुदा! मुझे दुनिया में सबसे अमीर बना दे।''

यह सुनकर फकीर उठा और वापस चल दिया। शाह ने उसे रोककर पूछा—''अरे फकीर बाबा! आप बिना कुछ कहे ही वापस जा रहे हैं।''

फकीर ने उत्तर दिया—''शाह! मैं आया तो आपसे कुछ माँगने था, पर मैंने देखा कि आप तो खुद ही खुदा से कुछ माँग रहे हैं, तो मैंने सोचा कि जो खुद ही माँग रहा हो वो दूसरे को क्या देगा? और यदि मुझे कुछ माँगना ही है तो मैं सीधे खुदा से क्यों न माँगूँ? जो तुझे देता है, वह मुझे भी दे देगा।''

एक शरीर से पाँच शरीरों जितना काम

गुरुदेव के निकट संपर्क में आने वाले इस तथ्य को भली भाँति जानते थे कि वे एक शरीर में रहते हुए भी पाँच शरीरों जितना भिन्न-भिन्न प्रकार के पाँच कार्यों का संपादन एक साथ ही करते रहते थे। यह सब कैसे हो पाता था, इस रहस्य का पता लगाने वाले एक व्यक्ति को 10 घंटे कठोर श्रम का अधिक-से-अधिक हिसाब लगाने पर यही कहकर चुप होना पड़ा कि इतना काम पाँच शरीरों, पाँच व्यक्तियों द्वारा ही किया जा सकना संभव है। एक व्यक्ति एक शरीर से तो इतना काम कभी भी नहीं कर सकता।

(1) जब बाहर रहना पड़े तब की बात अलग है, पर साधारणतया जब भी वे घर पर रहते थे तब 6 घंटा उपासना प्रतिदिन करते थे। यह आत्मिक श्रम एक व्यक्ति को पूरी तरह थका देने के लिए पर्याप्त है। शारीरिक श्रम 8 घंटे, मानसिक श्रम 7 घंटे और आत्मिक श्रम 6 घंटे ही हो सकता है। 6 घंटे की उपासना एक व्यक्ति को पूरे दिन थका देने वाली मेहनत समान गिनी जानी चाहिए।

(2) औसतन उनके पास देश-विदेश के प्रायः 500 पत्र आते थे; जिनमें से कितने ही काफी लंबे और जटिल समस्याओं से भरे रहते थे। इन सबको वे स्वयं खोलते थे। 400 के उत्तर कार्यकर्त्ताओं को नोट कराते हुए लिखाते थे। 100 लगभग ऐसे होते थे, जिनके उत्तर उन्हें स्वयं ही लिखने पड़ते थे।

दूसरों को बताकर इतनी जटिल समस्याओं के समाधान लिखाए भी नहीं जा सकते थे। फिर उनमें से कितने ही नितांत गोपनीय भी होते थे। बड़े दफ्तरों में जहाँ पत्र खोले और उत्तर दिए जाने का ही काम होता है, यदि हिसाब लगाया जाए तो यह काम दस क्लर्कों का है। अत्यंत मुस्तैदी से करने पर भी कोई एक व्यक्ति 10 घंटे से कम में नहीं निपटा सकता। गुरुदेव की आदत थी कि वे किसी भी पत्र को 24 घंटे से अधिक बिना उत्तर के रोकते न थे।

देश-विदेश में अगणित लोगों को अति महत्त्वपूर्ण मार्गदर्शन, प्रकाश एवं समाधान देने के लिए विशाल परिवार का संगठन और संबंध बनाए रहने के लिए यह आवश्यक भी था। देखने वाले और लेखा-जोखा लेने वाले यह जानकर चकित रह जाते थे कि किस प्रकार इतना काम वे एकाकी रहकर वृद्धावस्था में भी निपटा लेते थे।

(3) इतने ग्रंथों का लेखन उनका अद्भुत कार्य है। 20 वर्षों में जो उन्होंने लिखा है, उसका वजन लगभग उनके शरीर की तौल के बराबर है। आर्षग्रंथों का आदि से अंत तक अनुवाद, नवनिर्माण के संदर्भ में लिखी गईं लगभग 400 पुस्तकें, 100 विज्ञप्तियाँ और भी न जाने कितना क्या-क्या लिखा है, जो लिखा है, वह उतना गंभीर और महत्त्वपूर्ण है कि उससे सौ गुना अधिक पढ़ने की आवश्यकता पड़ी है।

यह पढ़ने-लिखने का काम इतना बड़ा है कि एक व्यक्ति पूरे 24 घंटे सारे जीवन भर यही करता रहे तो भी तुलना नहीं हो सकती, इतना तो मानना ही पड़ेगा कि यह कार्य एक व्यक्ति के पूरे समय और श्रम से कम नहीं है।

(4) व्यक्तिगत संपर्क, शिक्षण और सहायता प्राप्त करने, मार्गदर्शन परामर्श के लिए नित्य सैकड़ों व्यक्ति उन्हें घेरे रहते थे। प्रातः 6 बजे से लेकर रात

को 8 बजे तक 10 घंटे में से केवल एक घंटा ही मध्याह्न भोजन विश्राम का बचता था, बाकी 9 घंटे उनके आस-पास जमात जुड़ी ही रहती थी।

संपूर्ण भारत ही नहीं विदेशों तक से कष्टपीड़ितों से लेकर नवनिर्माण योजना में संलग्न कर्मठ कार्यकर्त्ताओं, साहित्यकारों, दार्शनिकों, विद्वानों और साधकों की भारी भीड़ में वे सदा ही घिरे रहते थे। इतना किए बिना इस विश्वव्यापी महाअभियान को गति प्रदान कर सकना संभव भी नहीं था, जिसके लिए वे जन्मे और जिए थे।

(5) पाँचवाँ कार्य उनका प्रचार कार्य और जनसंपर्क था। उपलब्ध सूचनाओं से यही प्रमाणित होता है कि प्रायः पूरे वर्ष उन्हें बाहर रहना पड़ता होगा अन्यथा इतने सम्मेलनों, आयोजनों, गोष्ठियों व्यक्तिगत परामर्शों तथा शोध-संपर्क के लिए महत्त्वपूर्ण प्रवासों की बात बन ही कैसे पाती? विगत 20 वर्षों में से एक भी दिन ऐसा नहीं मिलेगा; जबकि उनके बाहर रहने की सूचना उपलब्ध न पाया जा सके।

ये पाँचों ही कार्य उनके अनवरत रूप से चलते रहे। इनमें से प्रत्येक कार्य का विवरण इतना विस्तृत है कि उसे वर्ष के पूरे 365 दिन लगाए बिना निपटाया ही नहीं जा सकता। किसी भी दृष्टि से हिसाब लगा लिया जाए, किसी भी कसौटी पर परख लिया जाए, पाँचों प्रकार का प्रत्येक कार्य उनके निज के द्वारा ही संपन्न किया हुआ मिलेगा और उनमें से प्रत्येक इतना है, जो पूरे शरीर से समग्र तत्परता के साथ पूरे वर्ष में ही निपटाया जा सकता है।

इस बात को यों भी कह सकते हैं कि वे एक दिखते हुए भी पाँच थे। गायत्री माता के पाँच मुख और दस भुजाएँ कहे-बताए भर जाते हैं, पर उसके अनन्य उपासक ने प्रत्यक्ष करके दिखा दिया कि एक शरीर से पाँच गुनी स्तर की क्रिया-शक्ति कैसे संभव हो सकती है? इसके अतिरिक्त अभी उन पर सहसा विश्वास करना किसी के लिए भी कठिन होगा, पर हैं वे अक्षरशः सत्य। समय आने पर उनका भी सप्रमाण उद्घाटन सर्वसाधारण के समक्ष होकर रहेगा।

यह चर्चा इसलिए करनी पड़ी कि गुरुदेव मात्र व्यक्ति ही न थे, एक सजीव प्रयोगशाला के रूप में अध्यात्म विद्या की समर्थता और सार्थकता प्रमाणित करने आए थे और उनके प्रयोगों से सर्वसाधारण को परिचित होना ही चाहिए। निंदा-स्तुति से वे बहुत ऊँचे उठे हुए थे।

इन दोनों को उन्होंने समान समझा और लोग क्या कहते हैं, इस पर उन्होंने कभी ध्यान नहीं दिया। वे अपने अंतःकरण के अतिरिक्त और किसी को अपनी गतिविधियों की समीक्षा कर सकने लायक मानते ही न थे। ऐसे वीतराग की कोई क्यों न प्रशंसा-स्तुति करे और उससे क्या प्रयोजन सोचे? फिर जबकि वे आँख से ओझल हैं तो उन पर इसका क्या प्रभाव पड़ने वाला है।

चर्चा, तथ्यों पर प्रकाश डालने की दृष्टि से की गई और यह प्रकट करने का प्रयत्न किया गया है कि व्यक्ति सचमुच ही ईश्वर का राजकुमार युवराज है, सचमुच ही पिंड में ब्रह्मांड की समस्त शक्तियाँ बीज रूप में विद्यमान हैं और साधनात्मक प्रयत्नों द्वारा उन्हें उठाया, पाया जा सकता है। पाने लायक जो कुछ इस संसार में है, उसे आत्मदेव को जगाकर सहज ही पाया जा सकता है।

गुरुदेव कहते थे कि पाँच ज्ञानेंद्रियों की शक्ति को समझना और उनका सदुपयोग कर सकना ऐसा प्रयोग है, जिसके द्वारा अन्नमय कोश, मनोमय कोश, प्राणमय कोश, आनंदमय कोश, विज्ञानमय कोशों को जगाया जा सकता है और उनके सहारे समर्थ सिद्धपुरुष जैसा लाभ उठाया जा सकता है। वे यह भी कहते थे कि मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार और प्राण की पंचधा सूक्ष्मकाया स्थूलशरीर से भी असंख्य गुनी सामर्थ्यवान है। ❑

बच्चों में योगशक्ति का विकास

योग वह तत्त्व है, जो मनुष्य को महामानव एवं ऋषिस्तर की प्रज्ञा प्रदान करता है। जो उसके सुषुप्त संस्कारों को जगा अभिनव निर्माण की दिशा में उसे बढ़ाता है। योग का तत्त्व कहता है कि पहले अपनी आत्मसंपदा का ज्ञान प्राप्त करो, फिर संसार में अपनी आत्मा के अभिवर्द्धन का पथ प्रशस्त करो।

योग की शक्ति से मानव-विकास संभव है तथा इस पथ पर हमें सामूहिक रूप से बढ़ना चाहिए। जब बच्चों की बात आती है तो इसे इस रूप में समझना चाहिए कि उनका चित्त स्वभाव से चंचल है, परंतु असाध्य नहीं। उसमें विलक्षण प्रतिभा भरी हुई है, अंत:करण की शक्ति-संपदा का आलोक प्रत्येक बालक-बालिका में प्रस्फुटित होने योग्य होता है। यही योग की आधारशिला है एवं एक सुंदर, सफल एवं सर्वांगीण जीवन का आधार भी।

बच्चों में कैसे आत्मप्रज्ञा एवं आत्मनियमन की कला का विकास हो, यही महत्त्व का विषय है। इसे करने के लिए जो आवश्यक है, वह है परिपूर्णता का वह विषय-बोध, जिसके द्वारा मनुष्य में देवत्व की संभावना को मुखरित रूप दिया जा सकता है।

अंत:करण की शक्ति-संपदा को उचित रूप से उद्‌घाटित करने में योग का तत्त्वदर्शन ही सहायक है तथा इस मार्ग में उन्नति करने के लिए चाहिए प्रचंड संकल्पशक्ति, जो कि आवश्यक मनोबल द्वारा विकसित की जा सकती है। इसके लिए यही पहले से अभ्यास डाला जाए, स्वयं को जागरूक किया जाए तथा अपनी संभावना को पहचाना जाए तो स्वल्प प्रयास में ही योगशक्ति जाग्रत हो सकती है।

इसे ही कहते हैं योगाभिमान की प्राप्ति तथा चरित्र में जागरूकता एवं उज्ज्वलता के तत्त्व का समावेश। बच्चे इसे सीखें, इसके लिए उन्हें अभ्यास डाला जाए कि मानव-जीवन का सच्चा मूल्य वासनाओं और व्यक्तित्व की प्रतिभाओं में अंतर करना ही है।

इसे ही शक्ति की प्राप्ति तथा उसके सुसंयोजन एवं विकास का पथ कहेंगे। इसी के द्वारा मनुष्य में दैवी प्रतिभा का जागरण होता है तथा वह अपने विकास के पथ पर शीघ्र ही चलने लगता है।

यह बात बड़ी विचित्र-सी लगती है कि जिन बच्चों को खेलना-कूदना चाहिए या जिन्हें अपनी रुचि का विषय पकड़ना चाहिए, वे इस प्रकार की योग-साधनात्मक अभिरुचि का प्रदर्शन करें। उनके लिए तो यही उचित है कि वे अपना नैसर्गिक जीवन-क्रम अपनाएँ तथा विकास को अपनी रुचि अनुसार देखें, परंतु यह भी सत्य है कि योगशक्ति का प्राकट्य बहुत ही अल्पकाल में होने लग जाता है।

तब पता नहीं चलता, परंतु मनुष्य किसी अनजान कोने में यह आस्था भी रखता है कि एक दिन वह अवश्य आएगा, जब योग का तत्त्व उसमें पूर्ण रूप से जाग्रत हो सके। उसी के लिए उसके सारे प्रयत्न एवं प्रतिभा के अंकुरण हुआ करते हैं। उसकी शैली कुछ भी हो, पर करता वह किसी दिव्य सत्ता से आदान-प्रदान ही है।

इस दृष्टि से सोचा जाए तो बचपन का वह समय जो खेल-कूद में व्यतीत हो रहा होता है— वह अपने आप में एक संकल्पशक्ति के विकास का तथा मानव रूप के उच्च गुण-प्रतिभा का प्रतीक है

▶ 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

जिसमें बच्चे खेल-कूद के साथ मनोविनोद के लिए उन वस्तुओं को ढूँढ़ते हैं, जिनमें कि उनकी प्रतिभा निखरकर सामने आ सके।

ऐसा हो इसके लिए बच्चों को योग का अभ्यास तो कराएँ ही साथ ही उन्हें कुछ कलाओं का भी प्रशिक्षण दें, जैसे नृत्य, संगीत, नाटक इत्यादि। ऐसे में होगा क्या कि बच्चा जिस प्रतिभा के जागरण की माँग कर रहा है, वह ठंढे बस्ते में न कैद हो, एक विशिष्ट दायित्वबोध एवं उच्चचरित्र को प्राप्त होगी। ऐसा इसलिए; क्योंकि वस्तुस्थिति में बच्चा परमात्मा का निकट स्वरूप ही है।

उसे जरा समझा जाए, पहचान के उबारा जाए, संकल्पशक्ति का पुट छोटी-छोटी बातों में दिया जाए तथा आस्था का विकास किया जाए तो हर घर में एक महामानव तैयार होगा एवं वह दूसरों को जगाएगा।

कहने का तात्पर्य है कि बिखरी पड़ी शक्ति को समेटने पर जो प्रतिभा अकस्मात् उभर आती है, उसे ही प्रयोजन प्रदान कर अच्छे, सफल जीवन का निर्वाह करने में लगाया जा सकता है। इसके लिए कुछ विशेष नहीं, मात्र आंतरिक दोष-परिष्कार तथा मेधा-संपन्नता का अभ्यास बढ़ाया जाए।

बच्चे की एकाग्रता को सही जगह पर प्रस्थापन का नियोजन किया जाए तथा तार्किक रूप से उसे यह सोचने दिया जाए कि अंततः परमात्मा हमारे ही भीतर है। वही विशाल विश्व में विराजमान तथा जड़-चेतन का प्रतिनिधि है। उसे स्वरूपवत् जानकर मनुष्य उच्चकोटि की प्रतिभाशक्ति तथा अनुकूल प्रयोजन के निमित्त संकल्पशक्ति का अपने में विकास कर सकता है।

जो बालपन में तो चिर-विचित्र रूप में भाषा-सौष्ठव एवं चित्र निरूपण में कार्य करे, देखने-समझने की कला का विकास करे, मनोरंजन के साथ आत्मरंजन का भी विषय सिखाए तो थोड़ा बड़ा होने पर वह विस्तृत प्रतिभा के रूप में गुण-कर्म-स्वभाव का परिष्कार बने, मनुष्य में मनुष्यत्व का बीजारोपण कर उसे सफल व्यक्ति, आदर्श नागरिक तथा उच्च चरित्र से संपन्न देवदूत बनाए। ऐसा ही हम मनुष्यता को बनाना चाहते हैं तथा इसमें बालक प्रथम स्थान लें, ऐसी कामना है। ❑

जब नगर नायक ईसा को गिरफ्तार करने लगे तो उनके शिष्य शमौन पतरस से न देखा गया। वह तलवार निकालकर गिरफ्तार करने वालों की ओर झपटा।

ईसा ने उसे रोकते हुए कहा—''शमौन! तलवार म्यान में रखो। इन पर क्रोध मत करो। ये बेचारे नहीं जानते कि ये क्या कर रहे हैं, किंतु तुम्हें तो जानना चाहिए कि क्या उचित है और क्या अनुचित? यदि इनको अपने कृत्य का ज्ञान रहा होता तो ये ऐसा कदापि नहीं करते। अज्ञानी व्यक्ति क्रोध के नहीं, दया के पात्र हैं। इन्हें स्वयं भी क्षमा करो और परमपिता से भी इन्हें क्षमा करने हेतु प्रार्थना करो।''

सूर्य नमस्कार का मनोविकारों पर प्रभाव

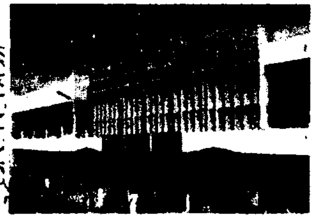

आधुनिक समय में जीवनशैली में आए परिवर्तन ने मनुष्य जीवन को बाह्य दृष्टि से जो कुछ भी लाभ पहुँचाया हो, परंतु मानसिक और आंतरिक रूप से ज्यादा गंभीर समस्याएँ और चुनौतियाँ उत्पन्न कर दी हैं।

विभिन्न उपचार-पद्धतियों के प्रचलन में होने के बावजूद व्यक्ति एवं समाज में निरंतर बढ़ते मनोरोग और मानसिक समस्याएँ अत्यंत चिंता का विषय हैं। ऐसे में आवश्यकता है कि बढ़ते मनोरोगों की रोक-थाम, प्रबंधन एवं समाधान के लिए समुचित उपायों एवं उपचार-विधियों की खोज की जाए।

इस संदर्भ में उल्लेखनीय है कि देव संस्कृति विश्वविद्यालय में ऐसे अनेक सार्थक शोधपरक कार्य संपन्न किए गए हैं, जिनको मानसिक स्वास्थ्य प्रबंधन व मनोव्याधियों के उपचार की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण कहा जा सकता है।

ऐसा ही एक महत्त्वपूर्ण शोध अध्ययन का कार्य वर्ष-2019 में विश्वविद्यालय के नैदानिक मनोविज्ञान विभाग के अंतर्गत संपन्न किया गया है, जिसका विषय है—'**बाईपोलर डिसऑर्डर पर सूर्य नमस्कार, अनुलोम-विलोम प्राणायाम तथा मनोदशा प्रबंधन का प्रयोगात्मक अध्ययन।**'

यह शोध शोधार्थी ऋषिकेश्वर त्रिवेदी द्वारा विश्वविद्यालय के **कुलाधिपति श्रद्धेय डॉ० प्रणव पण्ड्या जी** के विशेष संरक्षण एवं प्रो० हेमाद्री कुमार साव के निर्देशन में पूर्ण किया गया है। वैज्ञानिक एवं प्रायोगिक शोध-विधि पर आधृत इस अनुसंधान कार्य में भारतीय मनोविज्ञान के सैद्धांतिक, व्यावहारिक एवं क्रियात्मक पहलुओं का समावेश कर बाईपोलर डिसऑर्डर जैसी एक गंभीर मनोव्याधि के समुचित प्रबंधन एवं उपचार के लिए प्रभावकारी विधि को खोजने का सार्थक प्रयास किया गया है।

बाईपोलर डिसऑर्डर अर्थात यह एक मनोदशा विकृति का रोग है। इसमें रोगी की मनोदशा कभी अवसाद-विषाद और निराशा की ओर जाती है तो कभी सुखाभास, जुनून-उन्माद की ओर। दोनों ही स्थितियों में वह अस्थिर, समायोजन में असमर्थ और पागलपन का शिकार बनते देखा जाता है।

इस रोग में अवसाद व उन्माद—इन दोनों अवस्थाओं से व्यक्ति गुजरता है, जैसे कभी उदासी, थकान, आत्मग्लानि और निराशा का अनुभव करता है तो कभी अति आशावादी, बड़ी-बड़ी धारणा बनाकर अतिक्रियाशील हो जाता है। स्वभाव में चिड़चिड़ापन, मनोदशा में अचानक परिवर्तन, सनकीपन जैसे अनेक लक्षण इस रोग से ग्रस्त व्यक्ति में देखे जाते हैं।

मनोदशा से संबंधित उक्त मनोव्याधि एक घातक समस्या है और समय रहते इसका उचित उपचार व समाधान न किया जाए तो इसके दुष्परिणाम जीवन को समाप्त कर देने वाले होते हैं। ऐसे में इस रोग के समग्र एवं समुचित उपचार को ध्यान में रखकर किया गया यह शोधकार्य अत्यंत महत्त्वपूर्ण और उपादेयी है।

इस शोध की प्रायोगिक प्रक्रिया के लिए शोधार्थी द्वारा मनोदशा विकृति से ग्रस्त 100 लोगों

का प्रतिचयन विधि द्वारा चयन किया गया। ये सभी लोग मानसिक पुनर्वास केंद्र, दिल्ली में अपनी समस्या का उपचार न्यूनतम एक वर्ष या उससे अधिक समय से करा रहे थे। चयन में शोधार्थी द्वारा यह सुनिश्चित किया गया था कि सभी चयनितों की न्यूनतम शिक्षा 8वीं तथा आयु 30 से 45 वर्ष के मध्य हो।

शोधार्थी द्वारा प्रयोग आरंभ करने से पूर्व सभी चयनितों का शोध उपकरण की सहायता से स्वास्थ्य परीक्षण किया गया। इस परीक्षण के लिए जिन शोध उपकरणों को प्रयुक्त किया गया, वे हैं— (i) राबर्ट एम० ए० हीचिल्ड द्वारा निर्मित मूड डिसऑर्डर प्रश्नावली (MDQ), (ii) आर० सी० यंग, जे० टी० बिग्स, वी० इ० जिजलर, डी० ए० मेयर (1978) द्वारा निर्मित यंग मेनिया रेटिंग स्केल (YMRS) तथा (iii) टी. बेक. एरोन (1961) द्वारा निर्मित बेक डिप्रेशन इन्वेन्टरी (BDI)।

स्वास्थ्य परीक्षण के उपरांत प्रयोगात्मक समूह पर नियमित तीन माह की अवधि तक शोधार्थी द्वारा चिकित्सा तकनीकों का अभ्यास कराया गया। इस अभ्यास में योगाभ्यास के लिए कुशल योग प्रशिक्षक का सहयोग प्राप्त किया गया।

उपचार हेतु चिकित्सा तकनीकों के अंतर्गत शोध प्रयोग में जिन विशिष्ट विधियों को सम्मिलित किया गया, वे हैं—(i) सूर्य नमस्कार-तीन माह की अवधि तक नियमित बीस मिनट, (ii) अनुलोम-विलोम प्राणायाम—तीन माह तक नियमित दस मिनट तथा (iii) मनोदशा प्रबंधन—अभ्यासकर्त्ता की प्रतिक्रिया के अनुसार इस तकनीक को प्रयुक्त किया गया।

मनोयौगिक अभ्यास की उक्त अवधि पूर्ण होने पर शोधार्थी द्वारा पूर्व की भाँति पुनः सभी चयनितों का शोध उपकरणों द्वारा स्वास्थ्य परीक्षण किया गया। दोनों परीक्षणों से प्राप्त आँकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण करने पर शोधार्थी द्वारा शोध परिणाम के रूप में यह पाया गया कि मनोयौगिक तकनीकों के अभ्यास का बाईपोलर डिसऑर्डर के रोगियों पर सार्थक एवं सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

परिणामों में यह तथ्य स्पष्ट प्राप्त हुआ कि उक्त उपचार तकनीक के अभ्यास से मनोदशा विकृति से ग्रस्त लोगों के मेनिया तथा अवसाद के स्तर में सार्थक रूप से कमी आती है तथा उनके मानसिक स्वास्थ्य संवर्द्धन की दृष्टि से यह मनोयौगिक अभ्यास अत्यंत सार्थक एवं सकारात्मक परिणाम उत्पन्न करता है।

शोध अध्ययन का सबसे महत्त्वपूर्ण पक्ष इसमें प्रयुक्त मनोयौगिक तकनीकें हैं। इन्हीं विशिष्ट तकनीकों की विशिष्टता के फलस्वरूप शोधार्थी को शोध के परिणामों में सार्थकता एवं सकारात्मकता की उपलब्धि प्राप्त हो पाई है।

पहली तकनीक है—सूर्य नमस्कार। सूर्य नमस्कार एक समग्र योगाभ्यास की प्रभावी विधि है। इसमें आसन, प्राणायाम, मुद्रा, मंत्र, ध्यान आदि अनेक यौगिक प्रक्रियाओं को सम्मिलित किया गया है। साधना-क्षेत्र में सूर्य नमस्कार को स्वयं में एक पूर्ण साधना अभ्यास माना गया है।

स्वास्थ्य एवं चिकित्सा की दृष्टि से भी इस विधि का शरीर, प्राण, मन और आत्मा अर्थात संपूर्ण व्यक्तित्व पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इस अध्ययन में सूर्य नमस्कार को प्रयुक्त करने के पीछे शोधार्थी का उद्देश्य रोगियों के शरीर एवं मन की अवस्थाओं में लचीलेपन को विकसित करना था। साथ ही मानसिक सजगता और मन को रूपांतरित कर सकारात्मकता की ओर अग्रसर करने में यह विधि अत्यंत प्रभावी सिद्ध होती है।

मनोयौगिक अभ्यास की दूसरी विधि है—अनुलोम-विलोम प्राणायाम। यह आसनों की तुलना में ज्यादा सूक्ष्म विधि है, जो प्राण-ऊर्जा के नियंत्रण, सामंजस्य और सुचारु बनाए रखने में अत्यंत प्रभावी है। इसके नियमित अभ्यास से श्वसन प्रक्रिया के माध्यम से नाड़ियों, प्राण-नलिकाओं एवं प्राण के प्रवाह पर व्यापक प्रभाव पड़ता है, ताकि नाड़ियों की शुद्धि और फलस्वरूप मानसिक स्थिरता की प्राप्ति होती है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अनुलोम-विलोम प्राणायाम के अभ्यास से अनुकंपी एवं परानुकंपी तंत्रिकातंत्र में सामंजस्य स्थापित होता है, जिससे तनाव एवं चिंतास्तर में कमी आती है और जीवन में उपयुक्त समायोजन क्षमता का विकास होता है।

इसके साथ ही इस प्राणायाम का अभ्यास शरीर में रासायनिक स्तर पर हॉर्मोन्स तथा न्यूरोट्रान्समीटर्स पर भी सकारात्मक प्रभाव उत्पन्न करता है, जिससे एंडोर्फिन, डोपामिन, सिरोटोनिन आदि मन की खुशी, प्रसन्नता, सहजता आदि से संबंधित हॉर्मोन्स का स्राव होने लगता है।

यौगिक दृष्टिकोण से भी अनुलोम-विलोम प्राणायाम से चंद्र नाड़ी (इड़ा) और सूर्य नाड़ी (पिंगला) में संतुलन स्थापित होता है और धीरे-धीरे प्राण-ऊर्जा सुषुम्ना की ओर प्रवाहमान होने लगती है। पिंगला नाड़ी शरीर को, इड़ा नाड़ी मन व मानसिक क्षमताओं को तथा सुषुम्ना नाड़ी आत्मशक्ति को समृद्ध बनाती है। अत: यह प्राणायाम शरीर, प्राण, मन और भावना के स्तर पर संतुलन और सामंजस्य स्थापित कर संपूर्ण जीवन पर सकारात्मक प्रभाव डालने वाली अद्भुत तकनीक के रूप में कार्य करता है।

इस अध्ययन में भी बाईपोलर डिसऑर्डर के रोगियों के मानसिक स्वास्थ्य संवर्द्धन तथा अनेक शारीरिक, मनोवैज्ञानिक व भावनात्मक कारकों पर इस अभ्यास का सकारात्मक एवं सार्थक प्रभाव प्रत्यक्ष देखा गया है।

शोध अध्ययन की तीसरी विशिष्ट तकनीक है—मनोदशा प्रबंधन। इस तकनीक में मन की विभिन्न अवस्थाओं व आयामों से संबंधित गतिविधियों को सम्मिलित कर मन की अवस्था में संतुलन, सजगता एवं स्थिरता उत्पन्न की जाती है।

इस अध्ययन में मनोदशा प्रबंधन हेतु जिन विशिष्ट गतिविधियों एवं अभ्यासों को सम्मिलित किया गया था, वे हैं—(i) परामर्श (ii) संगीत चिकित्सा (iii) बेहतर आहार की व्यवस्था (iv) परिवार के सदस्यों का परामर्श (v) होम आउटिंग प्रक्रिया (vi) पिकनिक (vii) मूड चार्टिंग (viii) मनोदशा एक्टिविटी (ix) प्ले थैरेपी और (x) सुखद घटनाओं को याद करवाना।

मनोदशा के प्रबंधन में अपनाई गई उक्त सभी प्रक्रियाओं का रोगियों के स्वास्थ्य पर विशिष्ट एवं महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। जैसे—परामर्श द्वारा इस अध्ययन में शोधार्थी द्वारा रोगियों को यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया कि बाईपोलर डिसऑर्डर का संबंध स्वयं के मन से है। मन की स्थिरता, संतुलन से ही इसे ठीक भी किया जा सकता है।

संगीत भी मन की नकारात्मकता को दूर कर तनाव में कमी व सकारात्मक मनोदशा के विकास में सहायक प्रक्रिया है। आहार में सात्त्विकता से मन एवं शरीर की गतिविधियों पर सहजता से नियंत्रण स्थापित होने लगता है।

परिवारजनों का परामर्श भी रोगियों की मनोदशा को प्रतिबंधित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है। जीवनचर्या की आदतों व जीवनशैली के सुधार में यह प्रक्रिया अत्यंत सहायक

सिद्ध होती है। समूह चिकित्सा की प्रक्रिया में मरीज एकदूसरे के संपर्क में आते हैं तथा अपने अनुभवों का आदान-प्रदान कर सकारात्मक रूप से स्वयं की मनोदशा को सुधारने हेतु प्रेरित होते हैं।

मूड चार्टिंग भी मनोदशा प्रबंधन की प्रभावी प्रक्रिया है। इसमें रोगी की मनोदशा की अवस्था को चार्ट में नोट किया जाता है और उनके अनुरूप उपचार की रणनीति बनाई जाती है। इससे यह भी निर्धारित हो जाता है कि किस रोगी को कब और कौन-सी चिकित्सा अथवा अन्य प्रकार की सहायता प्रदान की जा सकती है। इसमें उपचारकर्त्ता भी मरीज की मनोदशा के बदलाव को अच्छी तरह से देख पाता है, जिससे उपचार-प्रक्रिया सहज एवं स्पष्ट हो जाती है।

प्ले थैरेपी भी मनोदशा पर सार्थक प्रभाव डालती है। प्ले थैरेपी, साइकोड्रामा, रिक्रियेशन थैरेपी के अंतर्गत रोगियों को उनकी क्षमता अनुसार कार्य दिया जाता है, जिससे कार्य पूरा हो जाने पर उनके भीतर कार्यसंतुष्टि और आत्मसंतुष्टि की भावना को विकसित किया जाता है। सुखद घटनाओं को याद करवाना भी मनोदशा प्रबंधन में सहायक प्रक्रिया है।

इस प्रक्रिया में रोगी अपने अवचेतन एवं अचेतन मन की गहराई में दबी भाव-स्मृतियों को बाहर निकालने में समर्थ बनता है। इस तरह मनोदशा प्रबंधन की उक्त सभी प्रक्रियाएँ एवं अभ्यास विशिष्ट और प्रभावी हैं तथा इस अध्ययन के परिणामों की सार्थकता में इनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है।

यह शोध अध्ययन मानसिक स्वास्थ्य प्रबंधन व मनोव्याधियों के उपचार में भारतीय मनोविज्ञान की मनोयौगिक तकनीकों की प्रभावशीलता, महत्ता एवं व्यापकता को स्पष्ट रूप से सामने लाने वाला अत्यंत उपादेयी व प्रासंगिक प्रयास है।

बाईपोलर डिसऑर्डर के समुचित एवं समग्र प्रबंधन के लिए यह शोध अत्यंत उपयोगी एवं कारगर तकनीकों को तो प्रस्तुत करता ही है, साथ ही अन्य मानसिक स्वास्थ्य से संबंधित समस्याओं के सार्थक एवं समुचित समाधान की दिशा में भी पर्याप्त मार्गदर्शन, प्रेरणा एवं प्रामाणिक तथ्यों को प्रस्तुत करता है। ❑

रूसी साहित्य के शिखर मैक्सिम गोर्की को आज हर कोई जानता है, पर बहुत कम इस बात से परिचित हैं कि उनके जीवन के प्रारंभिक दिन बहुत संघर्षमय रहे। आर्थिक रूप से विपन्न गोर्की को बहुत वर्षों तक नौकर के रूप में कार्य करना पड़ा और अपने साहित्य प्रेम के कारण अपने मालिकों के दुर्व्यवहार को भी सहन करना पड़ा। अपनी आर्थिक स्थिति से तंग आकर एक दिन उन्होंने स्वयं को गोली मार ली, पर गोली दिल में न लगकर फेफड़े में लगी और उनका जीवन बच गया।

इन्हीं कष्टमय दिनों में उन्होंने अपनी पहली पुस्तक लिखी और उसके प्रकाशित होते ही वे एक सुविख्यात लेखक के रूप में प्रतिष्ठित हो गए। बाद में अपने कठिन दिनों को याद करते हुए गोर्की ने एक बार कहा—"जब तक आदमी काम को कर्त्तव्य समझकर करता है, उसका जीवन गुलाम का होता है, पर जिस दिन वो उस काम को अपनाकर करता है, उस दिन उसके जीवन में सुख और आनंद की शुरुआत होती है।" जीवन में सुखी रहने का यह छोटा-सा सूत्र कई मायनों में बेशकीमती है।

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel का एक छोटा सा प्रयास सभी प्रियजनों को गुरु के ज्ञान का अमृत पहुंचाने का...

आप भी इस अमृत के ज्ञान को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने का प्रयास कर गुरुकार्य में भागीदार अवश्य बनें “!

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे। https://bit.ly/2KISkiz

◆ पूज्य गुरुदेव द्वारा साधकों को दिए गए दिव्य प्रवचन, अमृत वाणी, ध्यान साधना

◆ परम वन्दनीय माता जी द्वारा गाए गए भावनाशील प्रज्ञा गीत जो कि पूज्य गुरुवर को समर्पित रहे

▼ परम श्रद्धेय जी द्वारा लिखित पुस्तक आध्यात्मिक जीवन पर आधारित वीडियो एवम् आदरणीय चिन्मय भैया जी के दिव्यता से भरे उद्बोधन

एक छोटा सा प्रयास सभी प्रियजनों को गुरु के ज्ञान का अमृत पहुंचाने का...आप भी इस अमृत के ज्ञान को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने का प्रयास कर गुरुकार्य में भागीदार अवश्य बनें “!

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं। धन्यवाद

प्रस्तुत हैं शांतिकुंज ऋषि चिंतन चैनल पर

https://bit.ly/2KISkiz

तीन प्रकार का त्याग

(श्रीमद्भगवद्गीता के मोक्ष संन्यास योग नामक अठारहवें अध्याय की चौथी किस्त)

[श्रीमद्भगवद्गीता के अठारहवें अध्याय के दूसरे एवं तीसरे श्लोक की व्याख्या इससे पूर्व की किस्त में प्रस्तुत की गई थी। उन श्लोकों में भगवान कृष्ण अर्जुन को उनकी जिज्ञासा का उत्तर देते हुए कहते हैं कि 'कई विद्वान काम्य कर्मों को त्यागने को संन्यास समझते हैं तो कई विद्वान संपूर्ण कर्मों के फल को त्याग कहते हैं। कुछ विद्वानों के अनुसार कर्मों को दोष की तरह पूर्णरूपेण त्याग देना चाहिए तो कुछ के अनुसार यज्ञ, तप एवं दान जैसे कर्मों को छोड़कर शेष का त्याग कर देना चाहिए।' श्रीभगवान के ऐसा कहने के पीछे का कारण यह है कि वे अर्जुन की जिज्ञासा का सम्यक समाधान करने से पूर्व इस संदर्भ में प्रचलित सभी अवधारणाओं से उसे परिचित करा देना चाहते हैं।

उनका यह उत्तर प्रचलन में आई सभी शास्त्रीय धारणाओं को सूचीबद्ध कर देने से संबंध रखता है। कुछ मान्यताओं के अनुसार कर्मों के प्रकार 5 हैं, यथा—दैनिक कर्म, नैमित्तिक कर्म, काम्य कर्म, प्रायश्चित कर्म तथा कर्त्तव्य कर्म तो कुछ के अनुसार ये 4 प्रकार के होते हैं, जैसे नित्य कर्म, नैमित्तिक कर्म, काम्य कर्म एवं निषिद्ध कर्म। इस अवधारणा के अनुसार, नित्य एवं नैमित्तिक कर्म सत्कर्मों की श्रेणी में आते हैं, अतः वे करने योग्य हैं। काम्य—कामनाओं के लिए किए जा रहे हैं एवं निषिद्ध कभी नहीं किए जाने चाहिए, अतः वे दोनों त्याज्य या त्यागने योग्य कर्म हैं। इस तरह श्रीभगवान इन श्लोकों में प्रचलित मान्यताओं के विषय में अर्जुन को बताते हैं, ताकि आगे के श्लोकों में इस विषय में सही समाधान किया जा सके।]

इसके उपरांत श्रीभगवान कहते हैं कि

निश्चयं शृणु मे तत्र त्यागे भरतसत्तम।
त्यागो हि पुरुषव्याघ्र त्रिविधः सम्प्रकीर्तितः ॥4॥

शब्दविग्रह—निश्चयम्, शृणु, मे, तत्र, त्यागे, भरतसत्तम, त्यागः, हि, पुरुषव्याघ्र, त्रिविधः, सम्प्रकीर्तितः।

शब्दार्थ—हे पुरुषश्रेष्ठ (**पुरुषव्याघ्र**), अर्जुन! (**भरतसत्तम**), संन्यास और त्याग—इन दोनों में से पहले (**तत्र**), त्याग के विषय में (तू) (**त्यागे**), मेरा (**मे**), निश्चय (**निश्चयम्**), सुन (**शृणु**), क्योंकि (**हि**), त्याग (सात्त्विक, राजस और तामस-भेद से) (**त्यागः**), तीन प्रकार का (**त्रिविधः**), कहा गया है। (**सम्प्रकीर्तितः**)।

अर्थात हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ अर्जुन! तू संन्यास और त्याग, इन दोनों में से पहले त्याग के विषय में मेरा निश्चय सुन; क्योंकि हे पुरुषश्रेष्ठ! त्याग तीन प्रकार का कहा गया है। भगवान यहाँ अर्जुन से कहते हैं कि अर्जुन! इससे पूर्व के दो

श्लोकों में मैंने इन विषयों पर विभिन्न ज्ञानियों के मत से तुम्हें परिचित कराया था और अब इस संदर्भ में मेरा क्या निश्चय है अथवा मेरा क्या अभिमत है, वह मैं तुझे सुनाता हूँ और इन दोनों में से भी मैं त्याग को पहले बताता हूँ।

भगवान कहते हैं कि—'**तत्र त्यागे मे निश्चयं शृणु**' उस त्याग के संदर्भ में मेरा निश्चित अभिप्राय या अंतिम मत सुनो। यहाँ भगवान त्याग को पहले कहते हैं; क्योंकि बिना त्याग को समझे, संन्यास को समझ पाना संभव नहीं है। भगवान ने पहले गीता में कहा भी है कि मात्र कर्म को छोड़ने में कोई निष्काम नहीं हो जाता और कर्म को त्यागा भी नहीं जा सकता है। अत: सत्यमत दोनों के मध्य में ही है।

संत कबीर के जीवन की घटना आती है कि उनके पास एक व्यक्ति अपनी जिज्ञासा का शमन करने के लिए पहुँचा। उसने संत कबीर से प्रश्न किया—"क्या इस संसार में ऐसा कोई स्थान है, जहाँ पर वो यदि छिप जाए तो उस तक उसके कर्म का परिणाम न पहुँचे।" संत कबीर बोले—"इस संसार का निर्माण ही कर्म के आधार पर है। लोगों से छिपा जा सकता है, कर्मों के परिणाम से नहीं।"

उस व्यक्ति ने पुन: प्रश्न किया—"यदि ऐसा है तो ऐसा कौन-सा कर्म है, जिसको न करें तो परिणाम न मिले?" संत कबीर बोले—"कर्मों से भागने से परिणाम न मिलता हो, ऐसा नहीं है। इस संसार में हर व्यक्ति को कर्मों को करने की स्वतंत्रता है, पर उनका परिणाम चुनने की पराधीनता है। इसलिए त्याग कर्मों का नहीं, उनमें निहित कर्त्तापन का होना चाहिए, तब वह सच्चा त्याग होता है।" श्रीभगवान कहते हैं, वह त्याग तीन प्रकार का होता है।

(शेष आगामी अंक में)

गुरु अपने शिष्यों के साथ गुरुकुल में बैठे थे, प्रश्नोत्तरी का क्रम चल रहा था। एक शिष्य ने गुरु से पूछा—"गुरुदेव! संपत्ति का सदुपयोग न करने पर मनुष्य का क्या होता है?" गुरु ने उत्तर दिया—"वत्स! तुमने रेशम का कीड़ा देखा है? एक रेशम का कीड़ा रेशम इकट्ठी करके भारी-भरकम हो जाता है। पर इस प्रगति का क्या लाभ? वह बेचारा अपने ही बनाए जाल में जकड़कर मर जाता है। उसके पास की वह जमा-पूँजी, जिसे वो स्वयं के किसी काम में नहीं ला सकता—वह दूसरों का जी ललचाती है और वो लालची उसके ही जीवन का नाश करते हैं। धन का सदुपयोग न करने वाले संपत्तिवान भी उन्हीं रेशम के कीड़ों की तरह हैं, जो स्वयं तो आवश्यकता से अधिक संपत्ति का उपयोग नहीं ही कर सकते हैं, परंतु इसके कारण मात्र लालचियों और दुष्टों के भरण-पोषण का माध्यम बनते हैं। आवश्यकता से ज्यादा एकत्रित संपदा स्वयं के लिए एवं परिवार के लिए पतन का कारण बनती है।" शिष्य को उसके प्रश्न का उत्तर मिल गया था।

धन्य होंगे जो कि इस अभियान से जुड़ जाएँगे (उत्तरार्द्ध)

परमवंदनीया माताजी के उद्बोधनों की यह विशिष्टता है कि उनको सुन लेने वाला व्यक्ति अपने जीवन को सत्पथ की ओर ले चलने के लिए विवश हो उठता है। उनके शब्द भावनाएँ भी जगाते हैं और मनुष्य को संकल्पवान भी बनाते हैं। रक्षाबंधन के पुनीत अवसर पर उनके द्वारा दिए गए एक ऐसे ही विशिष्ट उद्बोधन की विगत किस्त में आपने पढ़ा कि परमवंदनीया माताजी कहती हैं कि रक्षाबंधन का पर्व वस्तुस्थिति में प्रायश्चित का एवं चिंतन-मनन का पर्व है। हममें से हरेक व्यक्ति को, जो एक साधक है, शिष्य है— उसे रक्षाबंधन के इस पावन पर्व पर अपनी आत्मसमीक्षा इस आधार पर करनी चाहिए कि वो पूज्य गुरुदेव के द्वारा निर्दिष्ट पथ पर आगे बढ़ पा रहा है या नहीं। परमवंदनीया माताजी कहती हैं कि गुरुसत्ता द्वारा चलाया गया यह अभियान ईश्वरीय है और जो इससे जुड़ेंगे, वो हमेशा के लिए धन्य हो जाएँगे। आइए हृदयंगम करते हैं उनकी अमृतवाणी को.......

समर्पण के बिना भक्ति कैसी?

अभी मैंने बताया था कि भक्त का समर्पण होना चाहिए, समर्पण यदि नहीं है, तो फिर वह भक्ति कैसी है? और यदि उसका समर्पण है, तो फिर उसको सब कुछ मिलता हुआ चला जाता है। नाचीज चंद्रगुप्त, जिसको गुरु की कृपा मिल गई और वह राजा बन गया, सम्राट हो गया। जरा-सा लड़का शिवाजी, अब वह छत्रपति राजा बन गया। कैसे बन गया? अपने गुरु की कृपा से वह बनता हुआ चला गया। उसने अपने अहं को गला दिया और अपने गुरु से उसने कहा कि जो भी कुछ है, आपका है।

अब जो भी मेरा शरीर है, जो भी मेरा ज्ञान है, जो भी कुछ है, सो सब आपका है। तो उन्होंने उसे अभय कटारी दे दी। गुरुजी ने तपश्चर्या की। गायत्री माता की उपासना की, उन्होंने अपने गुरु की, अपने आराध्य की उपासना की और सब कुछ उन्होंने अपनी जिंदगी में पा लिया। जो और व्यक्ति नहीं पा सकते हैं, सब कुछ उन्होंने पा लिया। मैं तो कहती हूँ कि भगीरथ से भी ज्यादा पा लिया। शिवाजी से भी ज्यादा पा लिया। अर्जुन से भी ज्यादा पा लिया। उन्होंने इतना कुछ पा लिया।

उन्होंने तो थोड़े काम किए थे; लेकिन गुरुजी ने तो कितना काम किया है? उन्होंने उपासना के द्वारा अपने जीवन का परिशोधन करके साहित्य की इतनी रचना की, जो अपने वजन से भी ज्यादा हो गई। समाज सेवा उन्होंने इतनी की, कि उनके बराबर किसी ने नहीं की। दीन-दु:खियों के उन्होंने आँसू पोंछे और उन्हें मुस्कान दी।

उन्होंने कहा—तुम रोते हुए जरूर मेरे पास आए हो; लेकिन मेरे पास से रोते हुए मत जाना, हँसते हुए जाना। बेटे! मैं हँसी देने वाला हूँ, मैं रोतों का साथ नहीं देता। मैं हँसने वालों का साथ देता हूँ, मुस्कराते हुए जाओ। जो भी तुम्हारी परिस्थितियाँ

हैं, हर परिस्थिति में मुस्कराते रहो, हँसते रहो, हँसाते रहो, खिलखिलाते रहो, दूसरों को देते रहो।

देकर के चलो, कुछ नहीं है, तो मुस्कान तो दे सकते हैं, प्रसन्नता तो दे सकते हैं। भावनाएँ तो दे सकते हैं, किसी को प्यार तो दे सकते हैं। जिनके हृदय में कोई प्यार का अंकुर ही नहीं है, जिनके हृदय पाषाण के हैं, उनका क्या करें ? उन्होंने सदैव प्यार का वह झरना बहाया, जिस झरने से लाखों की संख्या में व्यक्ति लाभान्वित होते हुए चले गए। उस झरने का पानी पीने से वह तृप्त होते हुए चले गए, जिसमें कि आप लोग बैठे हुए हैं।

गुरुजी का अनुकरण कीजिए

आप लोग अनुकरण करें, तो गुरुजी का करिए। हमारा अनुकरण कीजिए कि किस कदर हमारे अंदर साहस है, हिम्मत है। इस बुढ़ापे में भी हिम्मत से हम जाने कहाँ-से-कहाँ पहुँचते हुए चले जाते हैं। जहाँ कहीं, हमने देखा भी नहीं था, कहीं गए भी नहीं थे, घर से निकल करके कभी पाँव भी नहीं दिया था, घर में ही रहे। हमारी सारी जिंदगी एक घर में ही बीती और उस घर में ही अपने बच्चों का लालन-पालन किया और बच्चों को अपनी छाती से लगाए बैठे रहे, जिसमें आप लोग भी सम्मिलित हैं।

जब हमने सोचा कि हमारा लक्ष्य ऊँचा है, हम लक्ष्य के लिए जी रहे हैं, तो उन्होंने हमको बताया कि हमारा लक्ष्य क्या है और यह अभी अधूरा है। इसको पूरा करना तुम्हारा कर्त्तव्य होता है। हमने उस कर्त्तव्य को अपनी छाती से लगाया और अपने हृदय से पत्थर को बाँधा और कोई महिला होती, तो शायद उठकर भी इतनी जल्दी खड़ी नहीं हो सकती थी; क्योंकि हमारा जो जीवन बीता, वह दूध और पानी के तरीके से था और एकदूसरे के लिए हम इतने समर्पित थे कि हमारा जीना भी मुश्किल था, लेकिन उनके शब्द, उनका आदेश, उनका मार्गदर्शन हमारे लिए ब्रह्मवाक्य हो गया है। ब्रह्मवाक्य हो गया है, तो फिर एक टूटे- फूटे शरीर को जहाँ-कहीं भी जाना पड़ेगा, जाएँगे।

पिछले दिनों चार अश्वमेध अपने हिंदुस्तान में हुए—जयपुर हुआ, गुना हुआ, भुवनेश्वर हुआ, भिलाई हुआ। चार यहाँ हुए और दो विदेश में हुए। एक लंदन में हुआ, दूसरा टोरंटो में हुआ। दोनों ही यज्ञ अभूतपूर्व सफलता के साथ संपन्न हुए।

अभूतपूर्व सफल कार्यक्रम

यह कहना चाहिए कि अपने देश में तो हुए ही बहुत बढ़िया, लेकिन विदेशों में इतने बड़े कार्यक्रम हो जाएँ। यह बहुत बड़ी बात है। ऐसी उस कर्त्ता की लहर दौड़ रही है। रोम-रोम में व्याप्त हो रही है, न मालूम पैरों में पहिए लगा देती है कि न जाने क्या कर देती है? जाने हृदय में क्या रख देती है कि रात-दिन मालूम नहीं पड़ता है कि रात और दिन यह कहाँ निकल गया और किधर को गया? जो भी व्यक्ति दिखाई पड़ते हैं और जब हम छोड़ के आते हैं, तो वे रोते-बिलखते ऐसे मालूम पड़ते हैं जैसे अपनी माँ से बच्चे बिछड़ रहे हैं। माँ भी बिछड़ रही है। बेबस हमारी आँखों में भी आँसू आ जाते हैं। ऐसे भी बिछड़ते हैं। कितने बढ़िया कार्यक्रम

विस्मरन्ति स्वरूपं ये
त्यक्ता चोत्तरदायिता।
यैः पतन्ति तु पातस्य
गर्ते ते निश्चितं नराः॥

—प्रज्ञापुराण-1/2/27

अर्थात जो आत्मस्वरूप को भूलते और उत्तरदायित्वों से विमुख होते हैं, वे पतन के गर्त में गिरते हैं।

होते हैं कि उसमें मंत्री भी आते हैं, वहाँ के सांसद भी आते हैं। अँगरेज लोग भी उसमें शामिल होते हैं।

इसमें एक अँगरेज शामिल हुआ, जो कि तीन दिन तक धोती-कुरता और जनेऊ पहन करके शामिल हुआ। बराबर वह शाम को हर कार्य में शामिल हुआ। उसमें पादरी भी आए, सभी वर्ग के व्यक्ति आए और सभी व्यक्तियों ने इतनी सराहना की कि इतनी बड़ी भीड़ हमने कभी भी यहाँ के इतिहास में नहीं देखी। यहाँ की प्रदर्शनी देख करके उससे लोग इतने प्रभावित हुए और कहते हुए सुने गए कि इतना बड़ा संत, इतने बड़े ऋषि, जिन्होंने इतना बड़ा काम किया है, यह तो हमने सुना तक नहीं था।

हम बड़े दुर्भाग्यशाली रहे। हम ऐसे ऋषि के, ऐसे संत के दर्शन नहीं कर पाए, यह उनका कहना था। इतनी जनसंख्या थी कि मैं आपको क्या बताऊँ। मैं तो इतना बड़ा अश्वमेध देखकर के हैरान हो गयी। हम तो कहते थे कि हिंदुस्तान में बड़ा अश्वमेध था, पर यहाँ तो उससे भी ज्यादा बाजी मार गए। लाखों की संख्या में तो नहीं कहा जा सकता, तो भी एक-दो लाख की संख्या तो जरूर रही होगी। तीनों दिन को मिला करके एक लाख की संख्या से कम नहीं हो सकते हैं। इतनी संख्या थी, इतनी संख्या वहाँ के लिए बहुत बड़ी थी।

सभी को प्रभावित करता गुरुदेव का चिंतन

दो सौ लोगों ने अपने दोष-दुर्गुण छोड़े, शराब पीना छोड़ा, मीट खाना छोड़ा, अन्य भी जो नशीले पदार्थ लेते हैं, उन पदार्थों को उन्होंने छोड़ा और अपने मिशन के लिए काम करने की जिम्मेदारी उन्होंने ली। टोरंटो की तो एक मंत्री थीं, वह आईं और उस कार्यक्रम के लिए उन्होंने 30,000 दिए तथा इंग्लिश में कहा कि जैसा मिशन यह है, ऐसा मिशन हमने नहीं देखा। मैं जानती तो नहीं हूँ; लेकिन मैं भीतर से अपने अंतरंग से यह कहती हूँ कि इसके मुकाबले का दूसरा कोई मिशन नहीं हो सकता है। यह उन अँगरेज महिला ने कहा।

अन्य भी थे, जिनको बोलने का मौका दो-पाँच मिनट का ही दिया गया था; क्योंकि हम दो-तीन थे, इतना समय कहाँ से लाते? तो 2-2, 5-5 मिनट सबको दिए और सभी के यही उद्‌गार थे कि मिशन को बनाने वाला धन्य है। हम उसके चित्र को ही देखकर के पावन हो गए, उसकी झलक-झाँकी देखकर के ही हम धन्य हो गए।

ऐसा मौका हमको कभी नहीं मिलता। तीन साल हो रहे हैं। अभी अमेरिका बाकी है, अभी हम वहाँ जाएँगे। प्रणव वही हैं। मैं और शैलो 17 या 18 तारीख को जाएँगे और उसको पूरा करेंगे। उसके बाद तीन कार्यक्रम अगले वर्ष के लिए दिए हैं। जो वर्षाकालीन समय है, वह अपने यहाँ तो होता नहीं है, हमारे शांतिकुंज के जो ९ दिन के सत्र हैं, एक महीने के सत्र हैं, यह तो सदैव चलते रहते हैं, चलते रहेंगे। अन्य कोई बड़ा कार्यक्रम नहीं होता है, इसलिए वर्षाकालीन का जो समय है, वह विदेशों के लिए दिया है।

विश्व को मथ देंगे हम

तीन कार्यक्रम अगले वर्ष होंगे और कैसे होंगे? बड़े सक्सेसफुल होंगे। जैसे अब हुए, उससे भी बड़े होने जा रहे हैं और होंगे। इतना प्रचार-प्रसार बाहर भी हो रहा है। यहीं नहीं हो रहा है। यह नहीं समझना चाहिए कि यहीं हो रहा है, बाहर सारे विश्व का जब बीड़ा उठाया है, तो सारे विश्व को मथ करके हम रख देंगे। इसमें दो राय ही नहीं है। सारे विश्व को हम न मथें, ऐसी कोई बात नहीं है।

हमारे साथ जो शक्ति है, जो सामर्थ्य है, जो हमारे साथ प्रेरणा है, वह अभूतपूर्व ऐसी प्रेरणा है, जिसको लेकर के हम चलते हैं, तो थकावट महसूस

नहीं होती है। तीन-चार, दिन-रात यों ही निकल जाते हैं। चाहे रात भर जागना पड़े, चाहे दिन भर जागना पड़े, तो मालूम ही नहीं पड़ता। पीछे थोड़ी थकान मालूम पड़ती है, तभी थकान को निकाल लेते हैं; लेकिन काम करने में थकान मालूम नहीं पड़ती।

मिशन का मत्स्यावतार

बेटे! मैंने आपको यह बताया कि आपका मिशन किस तेजी से बढ़ता हुआ चला जा रहा है। जिस तरीके से मनु के कमंडलु में मछली थी और वह मछली बढ़ती हुई कहाँ तक पहुँच गई? आपका मिशन भी उसी तरीके से है और यह बढ़ता हुआ चला जा रहा है। इसमें जो कोई भी भागीदार बनेगा, वह श्रेय पाएगा, जिस तरीके से स्वतंत्रता संग्राम में जिन व्यक्तियों ने भाग लिया, वे आज स्वतंत्रता सेनानी हो गए। उनको पेंशन मिल रही है। आज कोई जेल भी जाएगा, तो पिटेगा भी और कुछ मिलेगा भी नहीं और तब जिन्होंने अपना जीवन दाँव पर लगाया था, उन्होंने आज श्रेय पा लिया। आप भी यदि श्रेय के भागीदार बनना चाहते हैं, तो फिर आप इसमें शामिल हो जाइए और शामिल होकर के आप आगे कदम बढ़ाइए।

आगे कदम बढ़ाने का मतलब है—रचनात्मक कार्य। हमारी गतिविधियाँ चलती ही रहनी चाहिए, ऐसा नहीं हो कि कार्यक्रम हो गए, अब हमको क्या करना है? छोटे-छोटे कार्यक्रम कर लेते हैं, बड़े कर लेते हैं, पर अब क्या करना है? यह नहीं होना चाहिए, निरंतर क्रियाशीलता आपके अंदर बनी रहनी चाहिए। आपके पिता के अंदर, आपके गुरु के अंदर इतनी क्रियाशीलता बनी रही कि अंतिम क्षणों तक उनका लेखन बंद नहीं हुआ, उनकी उपासना कम नहीं हुई, तो फिर आप इतने बूढ़े तो नहीं हो गए?

आप कोई 80 साल के नहीं बैठे हैं। आप कम उम्र के हैं। उनकी 80 साल की जिंदगी ऐसी खुशनुमा हुई कि शायद ही कोई ऐसा जीवन जी सकता होगा, जैसा उन्होंने जीवन जिया, तो फिर उनके बच्चे ऐसा जीवन क्यों नहीं जिएँगे?

शेर का बच्चा शेर होता है, संत का बच्चा संत होता है, ऋषि का बच्चा ऋषि होता है, तो फिर आप बकरी के बच्चे क्यों बनते हैं? बकरी के बच्चे नहीं होने चाहिए, मैं...मैं नहीं होनी चाहिए। हम सब होना चाहिए। मैं..मैं जो करता है, उसका गला कटता है। बकरी का गला कटता है और शेर का सिर दहाड़ता हुआ चलता है और जो दाएँ-बाएँ होते हैं, वे भी भाग जाते हैं। सभी भाग जाते हैं। आपको संत की संतान होना चाहिए। आपको उस माँ की संतान होना चाहिए, आपकी जो माँ तिल-तिल जलती हुई चली जा रही है। आपको उस माँ

नवनिर्माण के अवतरण की किरणें अगले दिनों प्रबुद्ध एवं जीवंत आत्माओं पर बरसेंगी।

वे व्यक्तिगत लाभ में संलग्न रहने की लिप्सा को लोक-मंगल के लिए उत्सर्ग करने की आंतरिक पुकार सुनेंगे। यह पुकार इतनी तीव्र होगी कि चाहने पर भी वे संकीर्ण स्वार्थपरता भरा व्यक्तिवादी जीवन जी ही नहीं सकेंगे।

—परमपूज्य गुरुदेव

का बच्चा होना चाहिए, आपको उस ऋषि की संतान होनी चाहिए, जिसने कि सारे विश्व के लिए तिल-तिल करके अपना जीवन गला डाला।

आपको उसकी संतान होना चाहिए। मैं आशा करती हूँ कि आप वैसा ही अनुकरण करेंगे और उसी पथ पर आप चलेंगे, जिस पथ पर आपका प्रेरणास्रोत चलता रहा। उन्हीं के मार्गदर्शन में यहाँ सारा कार्य हो रहा है। उसी मार्गदर्शन में आप उस ओर चलते रहेंगे। इन्हीं शब्दों के साथ मैं अपनी बात समाप्त करती हूँ।

॥ ॐ शांतिः ॥

सन् 1962 में शुक्र ग्रह पर अनुसंधान करने के लिए अमेरिका ने 'मेरीनर-1' नामक अंतरिक्षयान छोड़ा था। 544 करोड़ अमेरिकी डॉलर उस अनुसंधान पर खरच हुए, पर वह अभियान पूर्णतया निष्फल रहा।

अंतरिक्षयान निर्धारित पथ छोड़कर कहीं और चला गया। असफलता के कारणों को जाँचने के लिए एक समिति बैठी तो पता चला कि यात्रापथ तैयार करने में की गई गणितीय प्रक्रियाओं में एक स्थान पर किलोमीटर की जगह मीटर और धन के स्थान पर ऋण का प्रयोग हो गया था। यात्रापथ बनाने में ऐसे लाखों गणितीय समीकरण लगाए गए थे। उनमें से मात्र एक समीकरण में हुई एक छोटी-सी भूल ने करोड़ों की संपत्ति का नुकसान कर दिया।

इसके बाद अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी नासा के बने निदेशक श्री जॉर्ज मूलर ने अपने कार्यालय की दीवार पर एक चित्र टाँगा, जिस पर मात्र ऋण 'घटाव' का चिह्न लगा था और उसके नीचे लिखा था— "भूल कितनी भी छोटी क्यों न हो, हानि वह इतनी बड़ी कर सकती है, जिसका पश्चात्ताप अनेकों को करना पड़े, इसलिए भूल को कभी छोटा मत समझो।" सत्य यही है कि भूल छोटी भले हो, पर उसका परिणाम हमेशा बड़ा होता है।

विश्वविद्यालय परिसर से —229

योगमय हुआ विश्वविद्यालय

विश्व को योग के महान दर्शन से परिचित करा रहे देव संस्कृति विश्वविद्यालय ने अंतरराष्ट्रीय योग दिवस 21 जून के आयोजन से 70 दिवस पूर्व योगाभ्यास प्रोटोकॉल के क्रम में योग महोत्सव का भव्य आयोजन किया। इस कार्यक्रम का शुभारंभ देव संस्कृति विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति जी एवं उत्तराखंड संस्कृत विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो० दिनेश चंद्र शास्त्री जी द्वारा दीप प्रज्वलन से हुआ।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय के उच्च प्रशिक्षित योगाचार्यों ने भारत सरकार द्वारा निर्धारित प्रोटोकॉल के अनुसार हजारों की संख्या में उपस्थित विद्यार्थी, आचार्य एवं अन्य सदस्यों को योगाभ्यास कराया। इस क्रम में शिथिलीकरण, ग्रीवा चालन, स्कंध चालन व योगासन, जैसे—ताड़ासन, वृक्षासन, पादहस्तासन, अर्द्ध चक्रासन, त्रिकोणासन तथा बैठकर करने वाले आसन भद्रासन, वक्रासन, शशांकासन, उत्तानासन, मंडूकासन जैसे कई आसन करवाए गए।

इसके साथ ही पेट के बल वाले आसन जिनमें सेतुबंध, उत्तानपादासन, पवनमुक्तासन, शवासन इत्यादि भी करवाए गए। कपालभाति, नाड़ीशोधन, भ्रामरी, शीतली प्राणायाम आदि के साथ ध्यान भी कराया गया। साथ ही इन सभी योगासनों से होने वाले लाभों के विषय में भी बताया गया। इस अवसर पर उत्तराखंड संस्कृत विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो० दिनेश चंद्र शास्त्री ने कहा—"योग का अर्थ है जुड़ना अर्थात हम अपने आप से जुड़ें; अपने परिवार से; अपनी विद्या के साथ; अपने गुरु से, अपनी साधना से जुड़ें, तब जाकर योग सफल होता है। अपने जीवन में अनुशासन को लाना ही योग है।"

उन्होंने चित्त की वृत्तियों के विषय में बताते हुए कहा—"चित्त की दो वृत्तियाँ हैं—बहिर्मुखी एवं अंतर्मुखी। इन दोनों ही पर नियंत्रण करना अत्यंत आवश्यक है। अंतर्मुखी चित्त वाले व्यक्ति को क्रमशः आत्मा-परमात्मा के दर्शन होते हैं। इसी उद्देश्य से पूज्य गुरुदेव ने युग निर्माण योजना का सूत्रपात किया एवं यज्ञ तथा गायत्री को जन-जन तक पहुँचाया। वेद, रामायण, गीता आदि शास्त्रों में जो योग की धारा बही, वही धारा आज देव संस्कृति विश्वविद्यालय के प्रांगण में बहती दिख रही है।"

इस अवसर पर प्रतिकुलपति जी ने कहा—"हमारा मूलभाव बाहर शरीर में नहीं, उसके अंदर प्रवाहित हो रही भावचेतना, प्राणचेतना में है एवं उस प्राण को पोषण देने का कार्य योग करता है। योग चित्त की वृत्तियों का निरोध करता है। जिसने अपने अंदर के कर्म को यदि शुद्ध कर लिया, अपने मन को शांत कर लिया, वही बाहर की परिस्थितियों को सही करने की भी क्षमता रखता है।"

उन्होंने आगे कहा—"योग मात्र बीमारियाँ ठीक नहीं करता, बल्कि परम शांति भी प्रदान करता है और इसीलिए भारत को आध्यात्मिक ज्ञान-संपदा का सर्वोच्च शिखर कहते हैं। जीवन के मूल ध्येय, आधार और केंद्र की ओर दृष्टि लौटाने

का विज्ञान ही योग का विज्ञान है। मनुष्य में देवत्व का उदय, धरती पर स्वर्ग का अवतरण का मंत्र योग है।''

भारत की सामाजिक-सांस्कृतिक विरासत को वैश्विक स्तर पर पहुँचाने के साथ ही विश्वभर में जन-जन तक योग को पहुँचाने के संकल्प के साथ कार्यक्रम के अंत में प्रतिकुलपति जी ने माननीय कुलपति प्रो० दिनेश चंद्र शास्त्री जी को स्मृति चिह्न एवं पूज्य गुरुदेव द्वारा रचित वाङ्मय एवं साहित्य देकर सम्मानित किया।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय के योगाचार्य ने संयुक्त रूप से योगाभ्यास प्रोटोकॉल संपन्न कराया। इस अवसर पर विश्वविद्यालय के कुलसचिव, उप कुलसचिव, संकायाध्यक्ष, विश्वविद्यालय के समस्त विद्यार्थी एवं शिक्षकगण उपस्थित रहे।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय की विशिष्टता के दर्शन करने हेतु विगत दिनों मसूरी इंटरनेशनल स्कूल के विद्यार्थियों व शिक्षकों का आगमन हुआ। 3 दिवसीय कार्यशाला के अंतर्गत विद्यार्थियों ने न केवल विश्वविद्यालय की आध्यात्मिक दिनचर्या का पालन किया, वरन सभी ने आध्यात्मिक मार्गदर्शन भी प्राप्त किया।

अपने निजी दौरे पर उत्तराखंड के माननीय मुख्यमंत्री श्री पुष्कर सिंह धामी जी का भी देव संस्कृति विश्वविद्यालय में शुभागमन हुआ। प्रतिकुलपति जी के साथ व्यक्तिगत भेंट के उपरांत माननीय मुख्यमंत्री जी ने देव संस्कृति विश्वविद्यालय के परिसर का भ्रमण किया एवं नवनिर्मित याज्ञवल्क्य केंद्र का उद्घाटन किया।

विगत दिनों रूबल नागी आर्ट फाउंडेशन के सदस्यों का भी देव संस्कृति विश्वविद्यालय में आगमन हुआ। प्रतिकुलपति जी से शिष्टाचार भेंट के क्रम उन सभी ने कौशल निर्माण और उद्यमिता विषय पर अमूल्य मार्गदर्शन पाया, जिसमें आगंतुक सदस्यों को देव संस्कृति विश्वविद्यालय द्वारा चलाई जा रही विभिन्न गतिविधियों का एक ज्ञानवर्द्धक परिचय भी मिल पाया।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय में भारतीय सशस्त्र बलों के सम्मानित अतिथियों—एडीजी मेजर जनरल अतुल रावत, ग्रुप कमांडर ब्रिगेडियर एस०एस० नेगी, कमांडिंग ऑफिसर वी०के० मल्होत्रा, एडमिन ऑफिसर कर्नल वीरेंद्र सिंह, ट्रेनिंग कर्नल देवसार का आगमन हुआ।

एनसीसी के भविष्य की संभावनाओं को केंद्र में रखते हुए विद्यार्थियों के मध्य उनका उद्बोधन एवं प्रतिकुलपति जी के साथ एक सार्थक चर्चा भी संपन्न हुई।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय में रशियन हाउस में 'शिक्षा सहयोग विकास' के प्रमुख श्री विक्टर गोरेलेख का भी आगमन हुआ। प्रतिकुलपति जी द्वारा उनका स्वागत किया गया और साथ ही वैश्विक शिक्षा को आकार देने के लिए शिक्षा एवं विद्या के बारे में चर्चा की गई।

इसी क्रम में स्पा स्कूल लाट्विया के 14 अतिथियों का भी देव संस्कृति विश्वविद्यालय में आगमन हुआ। वासिली विग्दोरोव और उनके समूह ने अपनी 4 दिवसीय यात्रा में देव संस्कृति विश्वविद्यालय के योग, यज्ञ, वैज्ञानिक-अध्यात्म, आयुर्वेद जैसे विभिन्न विषयों के ज्ञान का लाभ उठाया।

समापन समारोह में लाट्वियाई समूह ने अपने अविस्मरणीय अनुभव साझा किए। वासिली विग्दोरोव एवं उनके समूह ने एक स्वर में कहा कि हमें गौरवान्वित करने और अपनी जीवंत भावना से हमारे समुदाय को समृद्ध करने के लिए देव संस्कृति विश्वविद्यालय परिवार का आभार एवं

धन्यवाद। इस अवसर पर प्रतिकुलपति जी ने भी अपना उद्बोधन दिया।

विगत दिनों देव संस्कृति विश्वविद्यालय और सरस्वती फाउंडेशन, बुडापेस्ट के बीच एक सहसंबंध स्थापित हुआ। वैदिक ज्ञान, आयुर्वेद, योग और मनोविज्ञान के क्षेत्र में वैज्ञानिक, तकनीकी और शैक्षिक प्रगति को बढ़ावा देने के उद्देश्य से इस सहक्रियात्मक कार्यक्रम का आयोजन प्रतिकुलपति जी के दिशा निर्देशन में किया गया।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय में निहंग सिख समुदाय के प्रतिष्ठित आध्यात्मिक नेता बाबा हरिजीत सिंह निहंग का भी आगमन हुआ। प्रतिकुलपति जी ने उनके स्वागत के क्रम को संपन्न कर शिष्टाचार भेंटवार्त्ता संपन्न की।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय में उत्तराखंड के पूर्व मुख्यमंत्री माननीय श्री त्रिवेंद्र सिंह रावत जी, महंत स्वामी रूपेंद्र प्रकाश जी एवं श्री मदन कौशिक जी का आगमन हुआ। विशिष्ट अतिथियों का प्रतिकुलपति जी ने हार्दिक स्वागत किया। माँ गायत्री की आरती के उपरांत आपसी बातचीत शुरू करते हुए प्रतिकुलपति जी ने देवभूमि उत्तराखंड के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला और इसके विकास पर चर्चा की।

शिक्षा और प्रसारण सहयोग के लिए एक महत्त्वपूर्ण विकास में ऑल इंडिया रेडियो (एआईआर) देहरादून के एक प्रतिनिधिमंडल ने देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार का भ्रमण किया। कार्यक्रम कार्यकारी श्री अनिल भारती जी के नेतृत्व में कार्यक्रम सचिव श्री सते सिंह नेगी और श्री विकास चमोली के साथ प्रतिनिधिमंडल का स्वागत देव संस्कृति विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति जी ने किया।

साक्षात्कार के दौरान प्रतिकुलपति जी ने विश्वविद्यालय की प्रवेश-प्रक्रिया, छात्र जीवनशैली और विद्या के साथ जुड़ी शिक्षा की गहन अवधारणा के बारे में जानकारी प्रदान की। आकाशवाणी देहरादून के अधिकारियों द्वारा आयोजित साक्षात्कार का उद्देश्य देव संस्कृति विश्वविद्यालय के शैक्षिक लोकाचार और एक सर्वांगीण शैक्षणिक वातावरण को बढ़ावा देने में इसके योगदान पर प्रकाश डालना रहा। विश्वविद्यालय के उद्देश्य पर प्रतिकुलपति जी की व्याख्या ने समग्र शिक्षा के प्रति संस्थान की प्रतिबद्धता को प्रदर्शित किया।

विद्यार्थियों की उपलब्धियों के क्रम में देव संस्कृति विश्वविद्यालय की बी०एस-सी० पर्यावरण विज्ञान की छात्रा आयुषी आर्य ने कराटे इंडिया ऑर्गनाइजेशन बिहार राज्य कराटे चैंपियनशिप में प्रथम स्थान हासिल किया। बोधगया में आयोजित इस प्रतिस्पर्धा में आयुषी ने असाधारण कौशल और दृढ़संकल्प का प्रदर्शन किया और इस प्रतिष्ठित प्रतियोगिता में विजयी होकर राष्ट्रीय स्तर पर चयनित हुई। ❑

अकबर की विशाल सेना एवं संसाधनों का सामना महाराणा प्रताप अपने थोड़े से सैनिकों और अल्प साधनों के माध्यम से करते जा रहे थे। धीरे-धीरे उनकी सारी संपत्ति व सेना समाप्त हो गई। निराश होकर महाराणा सपरिवार सिंध प्रदेश की ओर चल दिए। तभी भामाशाह उनसे मिलने पहुँचे और विनम्र स्वर में निवेदन करते हुए बोले—''महाराज! यदि आप ही निराश होकर हमें छोड़कर चल देंगे तो फिर हम किसके सहारे जीवित रहेंगे। आप वापस मेवाड़ चलिए और फिर से सेना तैयार कीजिए, जो भी खरच आएगा वो मैं दूँगा।'' महाराणा वापस मेवाड़ को लौट गए और भामाशाह की दी हुई संपत्ति से सेना खड़ी कर पुनः युद्ध किया और विजयी हुए। भामाशाह सदैव अपनी पूँजी को मातृभूमि की सेवा में अर्पित करने की प्रेरणा देते रहेंगे।

पंचमहाभूतों में प्रकाश का अवतरण

पंचमहाभूतों में प्रकाश का अवतरण भविष्य में इनमें परिवर्तन लाएगा। अभी वर्तमान में इन सबमें घुल रहा प्रदूषण आसुरी अँधेरे का परिणाम है। इसी कारण इन सभी में विषैली-विषाक्तता बस गई है, जिससे जीवन एवं जगत् अनेकों और असंख्यों रोगों-बीमारियों से भरा हुआ-घिरा हुआ है। पंचतत्त्व कहें अथवा पंचमहाभूत—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश; इन्हीं से हमारा अस्तित्व व व्यक्तित्व विनिर्मित है। संपूर्ण जगत्-सकल ब्रह्मांड में इन्हीं का विस्तार है। स्वयं अपने व सारे संसार के अस्तित्व का आधार यही हैं और इस सच से तो सभी सुपरिचित हैं कि अस्तित्व है तो व्यक्तित्व है। जब जैसा अस्तित्व होगा, वैसा ही व्यक्तित्व बनेगा। जगत् में यदि विष घुल रहा है, तो जीवन में भला अमृत कहाँ से ढूँढ़े मिल सकता है?

पंचमहाभूत—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश एवं इनसे जुड़ी तन्मात्राओं गंध, रस, रूप, स्पर्श एवं शब्द की चर्चा सांख्य दर्शन में की गई है। अन्य दार्शनिक ग्रंथों में भी इन्हें अलग-अलग ढंग से स्वीकारा गया है। वैदिक दर्शन की सभी परंपराओं में यही कहा गया है कि प्रकृति ने अपने इन्हीं घटकों, इन्हीं तत्त्वों से जगत् एवं जीवन का आधारभूत ढाँचा तैयार किया है। इसी ढाँचे के माध्यम से चेतना स्वयं की अभिव्यक्ति करने में समर्थ होती है। वैदिक दर्शन के इस सत्य को यूनान के अरस्तू व फारस के रसज्ञ जाबिर इब्न हय्याम ने थोड़ा हेर-फेर के साथ अपनाया है। जापानी एवं बौद्ध मत भी इसी सनातन सत्य की गूढ़ताओं की खोज करते हैं।

जीवन एवं जगत् के लिए इनकी महिमा व महत्ता कितनी है? इस सवाल का उत्तर हम इसी से समझ सकते हैं कि वेदों एवं पुराणों में इन्हें देव-देवी रूप माना गया है। पृथ्वी समस्त जीवन का धारण-पोषण करने वाली साक्षात् देवी है। इनकी महिमा गान करता हुआ ऋषि कहता है—**माताभूमिः पुत्रोऽहम् पृथिव्याः**—भूमि हमारी माता है और मैं पृथ्वी का पुत्र हूँ। वेदों में पृथ्वी सूक्त, पुराणों में भू-देवी की महिमा-कथा इसी का प्रमाण देती है।

प्रकृति की उच्चस्तरीय कक्षाओं से अवतरित हो रहा प्रकाश, अब पंचमहाभूतों में प्रकाश अवतरण की सूचना व संदेश देने लगा है। यह बताने-जताने व चेताने लगा है कि असुरों व आसुरी स्वभाव वालों के लिए भविष्य की संभावना समाप्त हो रही है। उन्हें या तो बदलना होगा या फिर समाप्त होना होगा।

जल को जीवन का पर्याय मानते हुए वेदों व पुराणों में 'वरुण देव' के रूप में इसकी अभ्यर्थना की गई है। इसी तरह से अग्नि को प्राण व ऊर्जा का रूप मानकर वेदों व पुराणों में 'अग्नि देव' की स्तुति के अनेकों रूप मिलते हैं। वायु तो हमारा श्वास ही है। इसके बिना तो एक पल के लिए भी जीना मुश्किल है। वायु देव का स्तवन वेदों व पुराणों में एक साथ किया गया है। इन सब देव-

देवीरूप पंचतत्त्वों-पंचमहाभूतों की गणना में अंतिम तत्त्व—अंतिम महाभूत 'आकाश' को परम देव-परमात्मा माना गया है।

जिन पंचतत्त्वों व पंचमहाभूतों की हम सबने अपनी सभ्यता व संस्कृति के आदि से देव-देवी रूप से आराधना की, वे ही आज मलिन हैं। जो कभी अकल्पनीय था, आज वही साकार है। भूमि का जो रूप आज दिखाई देता है, वह पहले किसने सोचा था—जलशून्य, जीवनशून्य, अपनी उर्वरता-आर्द्रता से रिक्त पृथ्वी माता स्वयं प्रदूषण की मार से बेहाल हैं। अब तो बस, भू की चर्चा भूकंपों की शृंखलाओं से ही की जाती है। यही स्थिति जल की है। प्रायः सभी जलस्रोत विषैले होते जा रहे हैं, काफी कुछ हो चुके हैं। अब चारों तरफ यही चर्चा होती है कि गंगाजल पीने योग्य नहीं रहा। अग्नि का ऊर्जारूप अब विध्वंसक हो चला है। अग्निकांड व ज्वालामुखी की बातें किसी से छिपी नहीं हैं। वायु या तो तूफानों-चक्रवातों से चर्चा में रहती है अथवा अपने प्रदूषण के कारण। वायु प्रदूषण की स्थिति यह है कि जहाँ-तहाँ श्वास लेने से भी दम घुटने लगता है। आकाश भले ही अभी स्वयं इतना प्रदूषित न हुआ हो, पर प्रदूषण का भार ढोने के लिए विवश है।

प्रदूषण के अथवा यों कहें पंचमहाभूतों—पंचतत्त्वों में घुल चुकी विषाक्तता की अब रोज-रोज नए-नए ढंग से चर्चा होती है। विषैलापन इतना ज्यादा बढ़ चुका है कि कब कौन-सी बीमारी, महामारी बनकर सामूहिक जीवन का नाश करने लगेगी, कुछ कहा नहीं जा सकता। अगर हम आज फिर से वेदों-पुराणों के पन्ने पलटें, इनकी कथा-गाथाओं को सुनें, तो यही पाते हैं कि प्राचीन ऋषियों ने इन पंचतत्त्वों को लेकर अनेकों जीवन के गीत गाए हैं। उन्होंने कभी सोचा भी नहीं होगा कि कभी इन्हीं के कारण मृत्यु का क्रंदन सुनाई देने लगेगा। कल्पनीय हो या अकल्पनीय परंतु सत्य-तो-सत्य ही रहता है। आज का सच यही है कि जिनसे हमारा अस्तित्व व व्यक्तित्व बना है, उन पंचमहाभूतों के विषैलेपन की सब ओर चर्चा है। सब ओर फैल रही ऐसी चर्चाओं के स्वरों के बीच इसके समाधान का चिंतन नदारद है।

यह चिंतन—ऐसा चिंतन तो तब सामने आएगा, जब हम तब और अब की जीवनशैली का अंतर समझेंगे। अभी भी हमारे बीच अस्सी-नब्बे साल के बुजुर्ग मिल जाएँगे। उनसे-उनके जमाने की बातें पूछें, उनसे जानने की कोशिश करें कि क्या आपने अपने बचपन में प्रदूषण के पाठ पढ़े थे? तो निश्चित ही उनका जवाब न में होगा। तब ऐसी कोई बात ही न थी। उन्होंने तो हर-हर गंगे कहते हुए गंगा मैया के गंगाजल में न जाने कितनी डुबकियाँ लगाईं थीं। यमुना मैया का जल भी तब

आज नव-विचार करें, पुनर्विचार करें, तनिक सोचें कि आखिर हम सब घर से बाहर निकलकर ऐसा क्या करते हैं, जिससे सभी पंचमहाभूत तत्काल विषैले होने लगते हैं। इन सबके पीछे एक ही कारण मिलेगा, हम सबकी सामूहिक जीवनशैली। जो सरेआम-खुलेआम यही बताती है कि हम सबने या हममें से बहुसंख्यक जनों ने अपनी जीवनशैली में असुरता बसा ली है। हम जो कभी देवपूजक हुआ करते थे, अचानक असुरपूजक हो गए। —*पूज्य गुरुदेव*

पीने योग्य था। कृष्णा, कावेरी, गोदावरी भी तब ऐसी ही प्रदूषण की मलिनता से मुक्त थीं। जो स्थिति जल की थी; वही वायु, अग्नि व धरती की थी।

अपने बुजुर्गों के बचपन की बातें चलिए जाने भी दें, अभी कुछ ही सालों पहले हुए कोरोना में लॉकडाउन की बातें करते हैं। बातें उन दिनों की हैं, जब हम सभी अपने-अपने घरों में बंद थे। तब—जब सड़कों पर मानव जीवन निषिद्ध था, उन थोड़े दिनों में अन्य वन-पशु सड़कों पर निर्भीक होकर घूमने लगे थे। तब अचानक वायु एवं जल प्रदूषण का स्तर गिरने और घटने लगा था। हम सभी जानते हैं कि समाचारपत्रों एवं अन्य संचार माध्यमों में इसकी ढेरों चर्चाएँ हुई थीं। आज के बहुप्रचलित सोशल मीडिया में भी इसकी कहानियाँ प्रचारित हुई थीं। इन सभी के बारे में आज नव-विचार करें, पुनर्विचार करें, तनिक सोचें कि आखिर हम सब घर से बाहर निकलकर ऐसा क्या करते हैं, जिससे सभी पंचमहाभूत तत्काल विषैले होने लगते हैं।

इन सबके पीछे एक ही कारण मिलेगा, हम सबकी सामूहिक जीवनशैली। जो सरे आम-खुले आम यही बताती है कि हम सबने या हममें से बहुसंख्यक जनों ने अपनी जीवनशैली में असुरता बसा ली है। हम जो कभी देवपूजक हुआ करते थे, अचानक असुरपूजक हो गए।

यह कब और कैसे हुआ ? धीरे-धीरे हुआ या फिर अचानक ? इसका उत्तर तो हमें ही खोजना होगा। लेकिन जो भी हुआ, वह हो गया। हमें इसी को बदलना होगा; क्योंकि असुर युग अब समापन की ओर है।

प्रकृति की उच्चस्तरीय कक्षाओं से अवतरित हो रहा प्रकाश, अब पंचमहाभूतों में प्रकाश अवतरण की सूचना व संदेश देने लगा है। यह बताने-जताने व चेताने लगा है कि असुरों व आसुरी स्वभाववालों के लिए भविष्य की संभावना समाप्त हो रही है। उन्हें या तो बदलना होगा या फिर समाप्त होना होगा।

ऋतु-चक्र बदलने पर जीवन-चक्र भी बदलता है। मौसम बदलने पर खान-पान एवं वेशभूषा भी बदलनी पड़ती है। सरदी के कपड़े यदि जोर-जबरदस्त गरमी में पहन भी लिए जाएँ, तो परेशानी ही पल्ले पड़ेगी और यदि गरमी के कपड़े सरदी में पहने जाएँ, तो बीमारी भुगतने के अलावा, परेशानी सहने के अलावा कोई अन्य मार्ग न बचेगा। आसुरी अँधेरे के समापन के साथ भी यही होना है। अपने अस्तित्व व व्यक्तित्व के लिए जीवन व जगत् के रक्षण के लिए जीवनशैली में परिवर्तन ही एकमात्र मार्ग है। पंचमहाभूतों में होने वाले प्रकाश का अवतरण, अंतरिक्ष का यही संदेश प्रकट कर रहा है। अंतरिक्ष के विस्तार में ऐसी और भी रहस्यमयताएँ हैं। ❑

सभी को बैठकर एकजुट हो चिंतन करना होगा कि इस वर्तमान की स्थिति के लिए कौन जिम्मेदार है ? क्यों प्रकृति असंतुलित हो रही है ? मानवकृत विभीषिकाएँ क्यों बढ़ती जा रही हैं ? मनुष्य को अपनी गरिमा के अनुरूप जीवन जीना सीखना होगा। समझदारी इसी में है कि समय रहते चेता जाए। हम अपने आस-पास को भी देखें एवं पर्यावरण को प्रदूषित होने से रोकें। समष्टिगत स्तर पर आंदोलन जन्मे एवं जनचेतना जागे, ताकि महाविनाश से पूर्व हम सँभल जाएँ। आध्यात्मिक चिंतन ही इनका समाधान दे सकता है।

गुरु पूर्णिमा के गुरुतर संकल्प

दिखने में युगांतकारी परिणाम लाने वाले समस्त प्रयत्नों का प्रारंभ छोटे परंतु सशक्त कदमों से होता है। बीज छोटा-सा होता है, पर समयानुकूल व्यवस्था बनते ही उसे पेड़ बनते देर नहीं लगती। ईंट छोटी-सी होती है, पर उसी ईंट को अन्य ईंटों का साथ मिल जाए, तो एक बुलंद इमारत बनते देर नहीं लगती।

अखण्ड ज्योति परिवार, गायत्री परिवार भी युग-परिवर्तन की दिशा में उठा हुआ एक ऐसा ही साहसी कदम है, जो भले ही दिखने में छोटा लगता हो, परंतु यह विश्वास रखना चाहिए कि यही आगे चलकर, बढ़कर समस्त विश्व में आदर्शवादिता का, उत्कृष्टता का वातावरण तैयार करने में सफल हो सकेगा।

जाहिर है कि इतने बड़े उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हमें कुछ महत्त्वपूर्ण कदम उठाने पड़ेंगे। घर में विवाह की छोटी-सी व्यवस्था बनानी हो तो उसकी तैयारियाँ महीनों पूर्व प्रारंभ हो जाती हैं तो युग-परिवर्तन जैसे ऐतिहासिक उद्देश्य की सफलता तभी सुनिश्चित हो सकेगी, जब प्रत्येक गायत्री परिजन इस महापूर्णाहुति के निमित्त अपने कर्त्तव्य व दायित्व को समझेगा व उसके अनुरूप उचित व्यवस्था बनाएगा।

इस हेतु उठाए जाने वाले मुख्य कदमों में से पहला कदम इस गायत्री जयंती से अपनी गायत्री उपासना को नियमित व व्यवस्थित कर दिए जाने से लिया जा सकता है। गायत्री-उपासना का सरल, परंतु प्रभावी विधान परमपूज्य गुरुदेव द्वारा रचित शाश्वत ग्रंथ '**गायत्री महाविज्ञान**' में से पढ़ा जा सकता है। जो लोग पूर्व से ही गायत्री-उपासना कर रहे हों, उन्हें तो मात्र अपनी दीक्षा के दिन लिए गए संकल्पों को पुनः स्मरण करके, उनको श्रद्धापूर्वक क्रियान्वयन की व्यवस्था बनानी है और जो अभी तक दीक्षित न हो पाए हों, परंतु गायत्री-उपासना में उनकी निष्ठा हो उन्हें पहला अवसर मिलते ही युगतीर्थ शांतिकुंज की यात्रा करके गायत्री मंत्र दीक्षा लेने के साथ इस पुनीत कार्य को आरंभ कर देना चाहिए।

माला कितनी की गईं, इससे ज्यादा महत्त्व इस बात का है कि की जा रही उपासना में निरंतरता हो, धैर्य हो व व्यक्तित्व के समग्र परिवर्तन का भाव सन्निहित हो। यह एक प्रमाणित सत्य है कि भाव, विचार, कार्य की त्रिवेणी जुड़ते ही दिव्य परिणाम दृष्टिगोचर होने लगते हैं।

दूसरा कार्य गायत्री परिवार के संगठनात्मक परिवार के रूप को ध्यान में रखकर प्रस्तावित किया जा रहा है। अपने परिवार की स्थापना के पीछे का मूल भाव पारिवारिकता, आपस का प्रेम, सहृदय आत्मीयता ही रहा है और इस भाव का पुनर्पोषण सभी केंद्रों पर वहाँ से जुड़े सदस्यों के जन्मोत्सवों को मनाने का क्रम आरंभ करने से हो सकता है।

बेहतर होगा यदि क्षेत्र की प्रत्येक शाखा, स्थानीय स्तर पर एक भावनाशील परिजन को, जो यदि सभी क्षेत्रीय परिजनों को जानते हों तो अच्छा रहेगा—को इस कार्य हेतु नियुक्त कर ले। उनका कार्य, क्षेत्रभर के सभी सदस्यों की जन्म व विवाह

तिथियों को इकट्ठा करके एक सूची तैयार कर लेने का होगा।

उस दिन विशेषकर वे उनके घर जाकर कर्मकांड प्रदीप में दिए जन्मदिन संस्कारपद्धति के अनुसार उनका जन्मदिन मनवा दें। यदि वे घर पर न हों तो उन्हें आने वाले सप्ताहांत पर गायत्री शक्तिपीठ, गायत्री प्रज्ञापीठ, गायत्री चेतना केंद्र इत्यादि पर आमंत्रित कर लें एवं वहीं उनका संस्कार संपन्न करा दें।

यदि वे परिजन कहीं बाहर के दौरे पर हैं तो फोन/ई-मेल/व्हाट्सअप द्वारा उन्हें परमपूज्य गुरुदेव व परमवंदनीया माताजी के शुभाशीषों व गायत्री परिवार की उनके श्रद्धा-समर्पण के प्रति कृतज्ञता को व्यक्त कर दें। आज के इस तकनीकी दृष्टि से विकसित वातावरण में व्हाट्सअप/फेसबुक से लेकर न जाने कितने माध्यम से यह कार्य किया जा सकता है।

ध्यान रहे कि ऐसा करने के पीछे का उद्देश्य एकदूसरे के प्रति प्रेमभाव को विकसित करने का है। इन अवसरों पर जुड़े लोगों के मन में नवनिर्माण की विचारधारा प्रेरित करने का है, उन्हें मानवीय जीवन की गौरव-गरिमा याद दिलाने का है—इसलिए इस कार्य को भावभरे हृदय से ही पूरा किया जाना चाहिए, किसी भार या बोझ की तरह नहीं।

ऐसे परिजन फिर अन्य संस्कारों को कराने भी गायत्री परिवार के पास ही पहुँचेंगे, जिससे संगठन को भी मजबूती मिलेगी व अपने परिवार के कार्यकर्त्ताओं में अन्य संस्कारों को कराने की कुशलता का भी विकास होगा। इसके साथ यह भी प्रस्तावित है कि क्षेत्र से नामित व्यक्ति अपनी मासिक रिपोर्ट तैयार करके श्रद्धेया जीजी के नाम से प्रेषित कर दें, ताकि ये सारी जानकारियाँ शांतिकुंज में केंद्रियकृत तरीके से रखी जा सकें।

इस हेतु तीसरा कार्य परमपूज्य गुरुदेव के विचारों को जन-जन तक पहुँचाने का है। बड़े संकल्पों के स्थान पर छोटे संकल्पों का परिणाम ज्यादा प्रभावी होता है। यदि हर पाठक परमपूज्य गुरुदेव के सद्विचारों के स्टीकर को एक नए स्थान पर प्रत्येक दिन लगाने का संकल्प ले-ले तो देखते-देखते विश्वभर में ये सद्विचार फैल जाएँगे।

ग्रामीण क्षेत्रों में यही कार्य दीवाल लेखन के माध्यम से किया जा सकता है तो शहरी इलाकों में हर व्यक्ति अपने व्हाट्सअप ग्रुप वाले माध्यम से परमपूज्य गुरुदेव के एक-एक सद्विचार को प्रत्येक दिन पोस्ट करके कर सकता है। जो लोग समर्थ हैं, वे लोग अखण्ड ज्योति की पत्रिका की सदस्यता बढ़ाने से लेकर, पुस्तक मेलों व वाङ्मय स्थापना जैसे महत्ती कार्यों का दायित्व उठा सकते हैं। मार्ग कोई-सा भी हो इसके मूल में भाव परमपूज्य गुरुदेव के विचारों को जन-जन तक पहुँचाना है।

हमारा प्रयोजन समझने में किसी को भूल नहीं करनी चाहिए। हम प्रचंड आत्मशक्ति की एक ऐसी गंगा को लाने जा रहे हैं, जिससे अभिशप्त सगरसुतों की तरह आग में जलते और नरक में बिलखते जन-समाज को आशा और उल्लास का लाभ दे सकें। हम लोकमानस को बदलना चाहते हैं। ***—परमपूज्य गुरुदेव***

चौथा प्रयास गोरक्षा व गो-संरक्षण का है। वृद्ध एवं अपंग गोवंश के पालन के लिए गायत्री परिवार द्वारा अनेकों गोशालाएँ चलाई जा रही हैं। इतनी गायों के संरक्षण के लिए जो आपसे बन पड़े, वो दायित्व निभाने की आवश्यकता भी है। इसके अतिरिक्त भी कुछ संकल्प लेने की जरूरत है जैसे—चमड़े की वस्तुओं का त्याग, गो- संवर्द्धन, गो-उत्पादों का उपयोग आदि। इस गुरु पूर्णिमा के पावन पर्व पर उपरोक्त में से किसी एक संकल्प को हमें अवश्य लेना चाहिए। ❑

गुरु वचनों में प्रीति

युग-परिवर्तन की वेला में, हँसकर कदम बढ़ाए हैं।
गुरु वचनों में प्रीति लगाने, की ही शपथ उठाए हैं॥

व्याकुलता से भरी हुई, मनःस्थितियाँ दुखदायी हैं।
स्वार्थभाव के परिपोषण में, हमने साख गँवाई हैं।
अपना आपा छोड़ तेरी, राहें जिनने अपनाई हैं।
योगक्षेम जीवन की उनकी, तुमने सदा उठाई हैं।
श्रद्धा और समर्पण की ये, ज्योति अखण्ड जलाए हैं।
गुरु वचनों में प्रीति लगाने, की ही शपथ उठाए हैं॥

तेरे संकल्पों ने नवयुग, की नव आस बँधाई है।
तेरे अंग-अवयव हैं हममें, जाग उठी तरुणाई है।
मनोकामना की कुंठित, वृत्ति में आग लगाई है।
युग-परिवर्तन के हित सेना, साथ आपके आई है।
हटना कहाँ हमें सत्पथ से, मन में जोश जगाए हैं।
गुरु वचनों में प्रीति लगाने, की ही शपथ उठाए हैं॥

मानव में देवत्व उदय की, दिखी आज परछाईं है।
स्वर्गिक सुख के लिए समूची, धरा बहुत अकुलाई है।
युग निर्माण योजना से, तुमने जो किरण दिखाई है।
कोटि-कोटि जन ने तुमसे, श्रद्धा संजीवनी पाई है।
अभिनव सृजन दिखेगा जग में, ये विश्वास बनाए हैं।
गुरु वचनों में प्रीति लगाने, की ही शपथ उठाए हैं॥

सदा-सदा से अनुचर तेरे, तुझसे प्रीति लगाई है।
तेरे पदचिह्नों पर चल, अपनी किस्मत चमकाई है।
भावभूमिका है अनुचर की, साथ तेरा सुखदाई है।
देख रही जगती गुरुवर, छा गई तेरी करुणाई है।
सिर्फ न काया से लगाव, तेरे पथ खपने आए हैं।
गुरु वचनों में प्रीति लगाने, की ही शपथ उठाए हैं॥

—शोभाराम शशांक

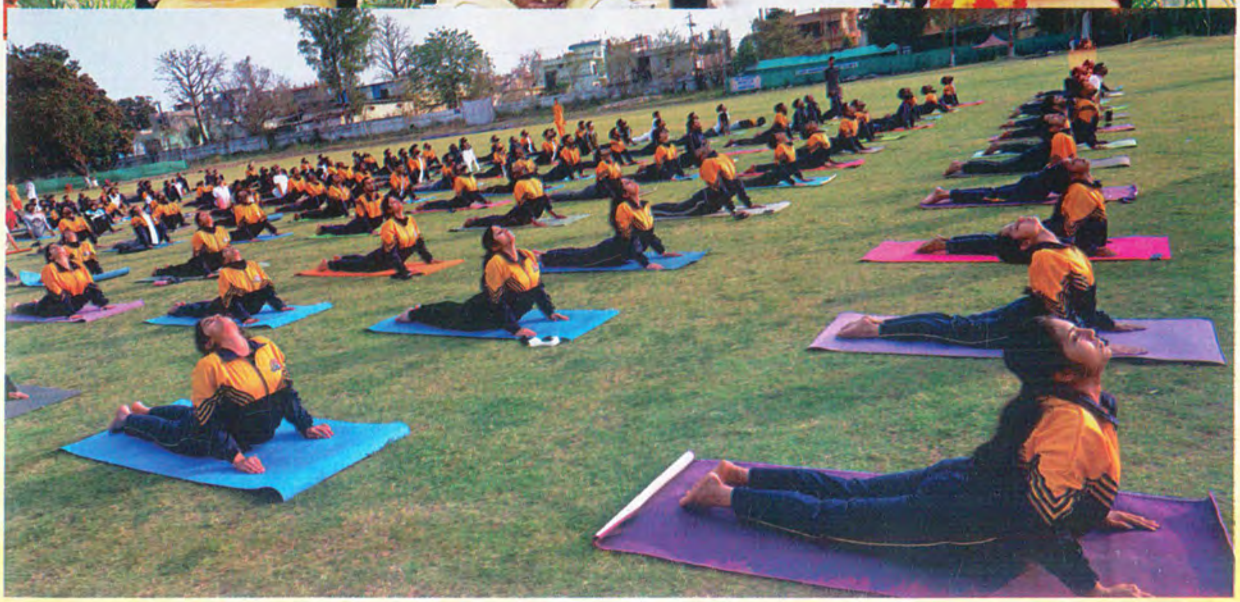

अंतरराष्ट्रीय योग दिवस पर देव संस्कृति विश्वविद्यालय के प्रांगण में योग प्रदर्शन कार्यक्रम उत्साहपूर्वक संपन्न

अखण्ड ज्योति
(मासिक)
R.N.I. No. 2162/52

www.awgp.org

प्र. ति. 01-06-2024
Regd. N0. Mathura - 025/2024-2026
Licensed to Post without Prepayment
N0. : Agra/WPP - 08/2024-2026

गायत्री परिवार यूथ ग्रुप, कोलकाता द्वारा 703 वाँ 'क्रमिक रविवासरीय वृक्षारोपण' एवं 'उतिष्ठत जाग्रत' व्याख्यान कार्यक्रम प्रतिकुलपति-देव संस्कृति विश्वविद्यालय की दिव्य उपस्थिति में सोल्लास संपन्न

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक-मृत्युंजय शर्मा द्वारा जनजागरण प्रेस, बिरला मंदिर के सामने, जयसिंहपुरा, मथुरा से मुद्रित व अखण्ड ज्योति संस्थान, बिरला मंदिर के सामने, मथुरा-वृंदावन रोड जयसिंहपुरा, मथुरा-281003 से प्रकाशित। संपादक-डॉ. प्रणव पण्ड्या।
दूरभाष — 0565- 2403940, 2972449, 2412272, 2412273 मोबाइल — 09927086291, 07534812036, 07534812037, 07534812038, 07534812039
ई-मेल- akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel के वीडियो युग निर्माण मिशन के लिए समर्पित है! हमारा एकमात्र उद्देश्य परम पूज्य गुरुदेव के विचारों को जन-जन तक पहुंचाने का है।

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे। https://bit.ly/2KISkiz

◆ पूज्य गुरुदेव द्वारा साधकों को दिए गए दिव्य प्रवचन, अमृत वाणी, ध्यान साधना

▼ आराध्य द्वारा लिखित पुस्तकों पर वीडियो, अखण्ड ज्योति के आर्टिकल, अमृत ज्ञान

◆ परम वन्दनीय माता जी द्वारा गाए गए भावनाशील प्रज्ञा गीत जो कि पूज्य गुरुवर को समर्पित रहे

▼ परम श्रद्धेय जी द्वारा लिखित पुस्तक आध्यात्मिक जीवन पर आधारित वीडियो एवम् आदरणीय चिन्मय भैया जी के दिव्यता से भरे उद्बोधन

एक छोटा सा प्रयास सभी प्रियजनों को गुरु के ज्ञान का अमृत पहुंचाने का...आप भी इस अमृत के ज्ञान को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने का प्रयास कर गुरुकार्य में भागीदार अवश्य बनें "!

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं। धन्यवाद

प्रस्तुत हैं शांतिकुंज ऋषि चिंतन चैनल पर

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

All World Gayatri Pariwar Official Social Media Platform

शांतिकुंज हरिद्वार के ऑफिशल व्हाट्सएप चैनल awgpofficial Channel को Follow करे

👇👇👇

https://whatsapp.com/channel/0029VaBQpZm6hENhqlhg453J

Shantikunj Official WhatsApp Number 8439014110

शांतिकुंज की गतिविधियों एवं ग्रुप से जुड़ने के लिए अपना नाम लिख कर **WhatsApp** करें

👇👇👇

https://wa.me/8439014110

Official Facebook Page:-

https://www.facebook.com/awgpofficial

Official Twitter:-

https://twitter.com/awgpofficial

https://twitter.com/DrChinmayP

Official Instagram:-

https://www.instagram.com/awgpofficial

https://www.instagram.com/shantikunjrishichintan

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

Official Telegram:-

https://t.me/awgpofficial

https://t.me/shantikunjrishichintan

Youtube Channel:-

https://yt.openinapp.co/nq7tt

https://www.youtube.com/c/RishiChintan

https://www.youtube.com/c/shantikunjvideo

AWGP Official Website

http://www.awgp.org/

http://literature.awgp.org

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel